शैक्षिक मंथन

(द्विभाषी मासिक)

शैक्षिक क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका

वर्ष : 8 अंक : 11   1 जून 2016

(ज्येष्ठ-आषाढ़, विक्रम संवत् 2073)

संरक्षक
मुकुन्द कुलकर्णी
प्रो.के.नरहरि

❖

परामर्श
डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल
प्रो. जगदीश प्रसाद सिंघल

❖

सम्पादक
प्रो. सन्तोष पाण्डेय

❖

उप सम्पादक
विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी
भरत शर्मा

❖

संपादक मंडल
प्रो. नन्दकिशोर पाण्डेय
डॉ. नाथू लाल सुमन
डॉ. एस.पी. सिंह
डॉ. ओमप्रकाश पारीक

❖

प्रबन्ध सम्पादक
महेन्द्र कपूर

❖

व्यवस्थापक
बजरंग प्रसाद मजेजी

प्रेषण प्रभारी
बसन्त जिन्दल
नौरंग सहाय भारतीय
कार्यालय प्रभारी
आलोक चतुर्वेदी 9782873467

प्रकाशकीय कार्यालय
82, पटेल कॉलोनी, सरदार पटेल मार्ग,
जयपुर (राज.) 302001
दूरभाष: 9414040403

दिल्ली ब्यूरो :
शैक्षिक महासंघ सदन, 606/13,
कृष्णा गली नं.9, मौजपुर, दिल्ली-110053
दूरभाष: 011-22914799

E-mail:
shaikshikmanthan@gmail.com
Visit us at:
www.shaikshikmanthan.com

एक प्रति 20/–   वार्षिक शुल्क 200/–
आजीवन (दस वर्ष) 1500/-

पृष्ठ संयोजन : सागर कम्प्यूटर, जयपुर

शैक्षिक मंथन मासिक
में प्रकाशित सामग्री से संपादक मण्डल
का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

बालकों का बहुमुखी विकास ग्रीष्मावकाश में संभव ❑ डॉ. रेखा भट्ट

खेल और बचपन एक दूसरे के पूरक हैं। खेल से बच्चे तनाव मुक्त ही नहीं होते बल्कि इससे धैर्य, सहयोग, सहनशीलता, भाईचारा भी सीखते हैं। खेलों से उनकी आन्तरिक शक्तियाँ, कौशल और शारीरिक क्षमता प्रकट होती है। ग्रीष्मावकाश में बच्चों पर पढ़ाई का बोझ कम होता है, ऐसे में खेलों के माध्यम से बच्चों की प्रतिभा में निखार लाया जा सकता है। उनकी महत्त्वाकाँक्षाओं को पूरा करने में मदद मिलेगी और वे जीवन में कभी हीन भावना से ग्रस्त नहीं होगें।

9

अनुक्रम

4.	ग्रीष्मावकाश की व्यावहारिकता	– सन्तोष पाण्डेय
6.	नैसर्गिक गुणों का विकास–पारम्परिक खेलों से	– प्रो. मधुर मोहन रंगा
12.	सार्थक ग्रीष्मावकाश	– विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी
14.	ग्रीष्मावकाश और छात्र	– बजरंगी सिंह
16.	आत्मचिंतन का अवसर–ग्रीष्मावकाश	– बजरंग प्रसाद मजेजी
21.	Some Reflections on Summer Vacation	- Dr. TS Girishkumar
24.	HRD ministry plans Vedic education board..	- Ritika Chopra
26.	उच्च शिक्षा की चिन्तायें	– डॉ. ओम प्रभात अग्रवाल
29.	सपनों से परे	– मनोज कुमार
32.	दाखिले का अंकगणित	– मृणाल पाण्डे
34.	उच्च शिक्षा को चाहिए नई चाल–ढाल	– हरिवंश चतुर्वेदी
36.	पठन का बदलता चलन	– दुर्गा प्रसाद सिंह
38.	उच्च शिक्षा का उद्देश्य	
40.	शैक्षिक समाचार	
42.	गतिविधि	

Summer Vacation, An Opportunity To Learn More

❑ Dr. A. K. Gupta

It is important to note that whatever one opts but common point is character building and making oneself mentally strong enough to face the challenges in the life. Thinking about the Nation, of course reaching after getting through Family, Society etc. Attempts should be focused on developing corruption free society. In these building years if one gets any of talent developed with character building qualities then we can count that to be real success.

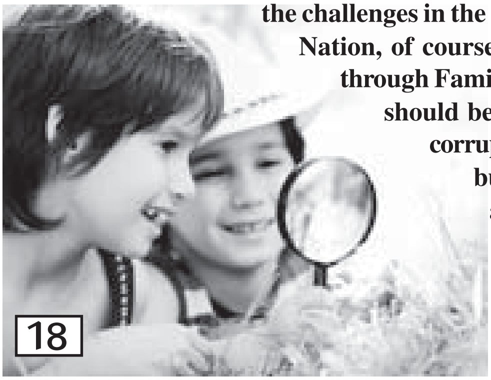

18

यह एक शुभ संकेत ही कहा जायेगा कि अब गरीब, अशिक्षित, उपेक्षित व वंचित वर्ग भी शिक्षा के महत्त्व के प्रति जागरूक होने लगा है व अनेक कष्ट उठाकर भी मँहगी औपचारिक शिक्षा के लिये किसी भी सीमा तक त्याग करने को तत्पर है। मध्यम वर्ग, उच्चमध्यम वर्ग व धनी वर्ग चाहे वह शहरी हो या ग्रामीण आज शिक्षा के महत्त्व व शक्ति को पहचानने लगा है। शिक्षा के साथ-साथ प्रतिभा के संपूर्ण निखार के प्रति समान रूप से सजग व सचेष्ट है। ग्रीष्मावकाश में नृत्य-गायन, खेल-कूद, प्रशिक्षण, व्यक्तित्त्व व नेतृत्व विकास शिविरों, अभिनय जैसी रचनात्मक गतिविधियों में भाग लेने हेतु बालकों को प्रेरित करता है। एक साथ कार्य करने से सहयोगियों के प्रति सद्भाव व सहकार भाव विकसित होता है जो उसके व्यक्तित्त्व में सकारात्मक दृष्टिकोण को समाहित करता है।

ग्रीष्मावकाश की व्यावहारिकता

❑ सन्तोष पाण्डेय

संपादकीय

भारत में अध्ययन-अध्यापन अर्थात शिक्षा प्रदान करने के लिये गुरुकुल पद्धति का अनुसरण अत्यन्त प्राचीन काल से होता आया है। गुरुकुल पद्धति में छात्र एक बार गुरुकुल में प्रवेश लेने के बाद, शिक्षापूर्ण करने के पश्चात् निकलता व गृहस्थाश्रम में प्रवेश करता। ब्रिटिश शासन में मैकालयी शिक्षा व्यवस्था के चलन के साथ ही वार्षिक परीक्षा पद्धति, ग्रीष्मावकाश व सत्र परीक्षा, सत्रावकाश का चलन बढ़ा। शिक्षा दीक्षा अनवरत बिना किसी अवकाश या अन्तराल के हो अथवा सत्रावकाश व ग्रीष्मावकाश के साथ, यह प्रश्न भारत में काफी विवाद का विषय रहा है। शिक्षाविदों का एक वर्ग यह भी मानता है कि भारत जैसे विविधतापूर्ण मौसम वाले व कृषि-रोजगार आधारित व्यवस्था में लम्बे समय के अवकाश नितान्त आवश्यक एवं मानवीय संसाधनों का अपव्यय है। वे मानते हैं कि यदि अवकाश शैक्षिक दृष्टिकोण से अपेक्षित भी हो, तो इन्हें इस प्रकार दिया जाना चाहिये जबकि कृषि कार्यों एवं कुटीर व गृह उद्योगों में अधिक श्रम की आवश्यकता हो एवं इन अवसरों पर छात्र कृषि कार्यों व कुटीर व गृह उद्योगों में अपने श्रम का योग देकर व्यावहारिक शिक्षा ग्रहण कर, रोजगार के अवसर सृजित करने योग्य बन सकें। यह बहुत ही सुसंगत व तार्किक प्रतीत होता है। किन्तु थोड़ी सी गहनता से विचार करने से ही ज्ञात होता है कि भारत जैसे विविधतापूर्ण मौसम वाले देश में क्या एक समान अवकाश व्यवस्था संभव है? देश भर में ग्रीष्मावकाश के समय व अवधि में भारी विविधता विद्यमान है। आज देश की अर्थव्यवस्था शनैः शनैः मौसम निरपेक्ष बन रही है। आधुनिक कृषि तकनीक के प्रयोग व मशीनीकरण के दौर में क्या छात्र द्वारा कृषि व अन्य व्यवसायों में सक्रिय भागीदारी का तर्क व्यावहारिक रह गया है। एतदर्थ आवश्यक हो गया है, कि अवकाशों विशेषत: ग्रीष्मावकाश की व्यवहार्यता पर अनेक दृष्टिकोण से विचार किया जाना चाहिये।

स्वामी विवेकानन्द जी ने शिक्षा को एक भिन्न दृष्टिकोण से रखते हुये कहा कि औपचारिक शिक्षा मात्र ही शिक्षा नहीं है। औपचारिक शिक्षा जानकारियों का संग्रह है। वास्तव में शिक्षा का अर्थ तो प्रत्येक व्यक्ति की अन्तर्निहित क्षमताओं के पूर्ण प्रकटीकरण का अवसर प्रदान कर व्यक्ति के संपूर्ण व्यक्तित्व का विकास करना व उसे समाजोपयोगी व्यक्ति बनाने में योग देना है। इस संपूर्ण शिक्षा प्रक्रिया में औपचारिक शिक्षा के साथ-साथ सृजनात्मक व रचनात्मक अभिरुचियों को प्रेरित कर पूर्णता प्रदान करना शिक्षा का ही कार्य है। इस दृष्टिकोण से देखा जाय तो आज की शिक्षा व्यवस्था जड़ता की अवस्था तक औपचारिक बन चुकी है। संपूर्ण शिक्षा का अर्थ कक्षाओं में निरन्तर उपस्थिति पाठ्यक्रम व पाठ्यपुस्तकों तक सीमित अध्ययन-अध्यापन, इसी पर आधारित परीक्षा व्यवस्था व मूल्यांकन व्यवस्था तक सीमित रह गया है। परीक्षाओं में प्राप्तांकों का प्रतिशत व श्रेणी ही व्यक्तिगत योग्यता व सफलता का मापक बन गयी है। समय-समय पर होने वाली परीक्षाओं व सतत् व व्यापक मूल्यांकन व्यवस्था (सी.सी.ई.) भी औपचारिकताओं की जकड़न को भेदने में समर्थ नहीं है। ऐसे में कैसे

गुरुवर रवीन्द्रनाथ ठाकुर, सत्या नडेला या नन्दन नीलकेणी पैदा हो सकेंगे? यह संशय बना रहता है। इस जकड़न से बाहर निकलने का एक मात्र उपाय बच्चे की स्वाभाविक प्रवृत्तियों को विकसित करने योग्य अवसर प्रदान करने वाली शिक्षा व्यवस्था को विकसित करने में निहित है औपचारिक शिक्षा से परे स्वाभाविक अभिरुचियों को विकसित करने के अवसरों से परिपूर्ण व्यवस्था बनाने की आवश्यकता है। औपचारिक शिक्षा व्यवस्था में ग्रीष्मावकाश जैसे अन्तराल इन रचनात्मक व सृजनात्मक प्रवृत्तियों को पल्लवित करने के अवसर बन सकते हैं।

मनुष्य में कुछ मूलभूत प्रवृत्तियाँ होती है। इनमें कुछ न कुछ करने (Workmanship)की प्रवृत्ति भी सम्मिलित है। स्वभावत: बच्चा भी हर समय कुछ न कुछ नया करने व सीखने को तत्पर रहता है। औपचारिक शिक्षा उसकी इन्हीं प्रवृत्तियों को एक राह प्रदान करती है। इन प्रवृत्तियों के कारण ही वह सीखना प्रारंभ करता है। परन्तु उसकी सभी रचनात्मक प्रवृत्तियों को एक समान गतिविधियों में बाँध देने से उसकी अनेक अभिनव प्रवृत्तियाँ दब जाती हैं। जैसे जैसे औपचारिक शिक्षा का स्तर बढ़ता जाता है, वह एक निश्चित पाठ्यचर्या, पठन-पाठन, परीक्षा व मूल्यांकन की सामान्य व्यवस्था में ही अपनी सफलता तलाशने लगता है। परिणामत: उसकी संपूर्ण प्रतिभा, योग्यता व क्षमता का आकलन सीमित अर्थों में होने लगता है। इस समस्त औपचारिक प्रक्रिया में व्यक्ति की अनेक क्षमतायें, सम्भावनायें, प्रतिभा, सामान्य से हटकर कुछ पृथक करने की इच्छा व प्रवृत्ति दब कर रह जाती है। इन सभी को एक अवसर प्रदान करने का सहज व सरल मार्ग अवकाश ही हो सकता है, जबकि संबंधित व्यक्ति पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तक कक्षा में उपस्थिति, जाँच परीक्षा के बंधनों से मुक्त होकर कुछ नया करने के लिये उद्यत होता है। अभिभावक भी उनकी नयी प्रवृत्तियों को प्रेरित करने में यथा संभव योग देने का प्रयास करते हैं। यह सभी तो सैद्धान्तिक विवेचन है। व्यावहारिक जीवन में बच्चों के लिये ग्रीष्मावकाश की आवश्यकता व उपयोगिता पर विचार करते समय आयुवर्ग, आयवर्ग व शिक्षा के स्तर के अनुरूप विचार करना अधिक उपयोगी होगा।

उच्च प्राथमिक शिक्षा भारत में 6 से 14 की आयु के सभी बच्चों के लिये अनिवार्य है व नि:शुल्क रूप से अधिकार के रूप में प्राप्त है। परन्तु ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के गरीबी व अशिक्षा से अभिशिप्त वर्ग में शिक्षा के प्रति जागरूकता का स्तर बहुत ही नीचा है। मध्याह्न भोजन योजना उनके बच्चों को स्कूल में भेजने का बड़ा आकर्षण है। यह वर्ग बच्चों को शिक्षित करने व प्रतिभा विकास में उतना सक्रिय योग नहीं दे पाता है। ऐसे में उनके लिये ग्रीष्मावकाश का कोई विशेष महत्त्व नहीं है। इस वर्ग के लिये बच्चों की प्रतिभा को पहचानने व उजागर करने के लिये, अवकाश में ही नहीं, सामान्य शैक्षिक दिवसों में विशेष कार्यक्रम अपनाने की आवश्यकता है। यह एक शुभ संकेत ही कहा जायेगा कि अब गरीब, अशिक्षित, उपेक्षित व वंचित वर्ग भी शिक्षा के महत्त्व के प्रति जागरूक होने लगा है व अनेक कष्ट उठाकर भी मँहगी औपचारिक शिक्षा के लिये किसी भी सीमा तक त्याग करने को तत्पर है। मध्यम वर्ग, उच्चमध्यम वर्ग व धनी वर्ग चाहे वह शहरी हो या ग्रामीण आज शिक्षा के महत्त्व व शक्ति को पहचानने लगा है। शिक्षा के साथ-साथ प्रतिभा के संपूर्ण निखार के प्रति समान रूप से सजग व सचेष्ट है। ग्रीष्मावकाश में नृत्य-गायन, खेल-कूद, प्रशिक्षण, व्यक्तित्त्व व नेतृत्व विकास शिविरों, अभिनय जैसी रचनात्मक गतिविधियों में भाग लेने हेतु बालकों को प्रेरित करता है। एक साथ कार्य करने से सहयोगियों के प्रति सद्भाव व सहकार भाव विकसित होता है जो उसके व्यक्तित्त्व में सकारात्मक दृष्टिकोण को समाहित करता है।

उच्च माध्यमिक शिक्षा भावी शैक्षिक जीवन की आधारशिला होती है। अभिरुचि के अनुसार भावी कॅरियर बनाने हेतु विषय चयन भी करना होता है। आज जिस प्रकार का तीव्रतम प्रतियोगी वातावरण है, छात्रों की संपूर्ण शक्ति औपचारिक शिक्षा के साथ भावी कॅरियर हेतु प्रवेश परीक्षा की तैयारी भी करनी होती है। अवकाश का उपयोग प्रतियोगी प्रवेश परीक्षाओं के लिये आवश्यक कोचिंग प्राप्त करने की आवश्यकता अवकाशों में ही पूरी की जाती है। उच्च माध्यमिक के पश्चात् विभिन्न तकनीकी, चिकित्सा, व्यवसायों में प्रवेश होता है। इन पाठ्यक्रमों के शिक्षण व प्रशिक्षण में जितना कठोर श्रम करना होता है, उसकी मानसिक बोझिलता को अवकाश द्वारा ही हटाया जा सकता है और अगले सत्र में कठोर परिश्रम हेतु मानसिक पुर्नशक्तिकरण होता है। बीच-बीच के लघु अवकाश भी मानसिक रूप से रिफ्रैश होने में सहायक होते हैं, उच्च शिक्षा में भी अध्ययन में गहनता लाने में ग्रीष्मावकाश का योग रहता है। वार्षिक सत्र शिक्षण अथवा सेमेस्टर शिक्षण व्यवस्था दोनों में ही निर्धारित पाठ्यक्रम के अध्ययन के उपरांत अवकाश का उपयोग विभिन्न संदर्भ ग्रन्थों, शोध संदर्भों के अध्ययन व अन्य प्रायोगिक शैक्षिक सर्वेक्षणों को पूर्ण करने में किया जाता है। यह छात्र को औपचारिक ज्ञान के साथ-साथ एक व्यावहारिक अन्तदृष्टि विकसित करने में सहायक हो सकता है। देशाटन, शैक्षिक भ्रमण आदि मनुष्य को व्यावहारिक व विभिन्नता पूर्ण समाज का दिग्दर्शन कराने में सहायक होते हैं। विभिन्न प्रकार की सामाजिक गतिविधियों यथा एनसीसी, एन.एस.एस., स्काउट व गाइड शिविर, पर्वतारोहण प्रशिक्षण, रिवर रॉफ्टिंग जैसे साहसिक खेलकूद इत्यादि के आयोजन व सहभागिता के लिये अवकाश आवश्यक है। कृषि में फसल चक्र में उर्वरता को बनाये रखने के लिये खेत को एक वर्ष खाली छोड़ा जाता है। इससे उर्वरता का पुनर्चक्रण संभव होता है, जीवन में भी अवकाश का यही महत्त्व है। विश्व भर में अवकाशों व सत्र अवकाशों का व्यापक चलन है। अवकाश किसी प्रकार का आराम नहीं है, वरन् आगे के लिये क्षमता विकास व व्यक्तित्व विकास का मार्ग प्रशस्त करने की राह है। ग्रीष्मावकाश व अन्य लघु अवधि अवकाश का उपयोग मनुष्य के स्वयं के विकास की संभावनाओं और क्षमताओं की अभिव्यक्ति के लिये होना चाहिये। अवकाशों के सदुपयोग में आर्थिक दृष्टि से असमर्थ व्यक्तियों के लिये विशेष कार्यक्रम राज्य द्वारा संचालित व वित्त पोषित होने चाहिये। ❑

नैसर्गिक गुणों का विकास-पारम्परिक खेलों से

❑ प्रो. मधुर मोहन रंगा

''विविध बोधगम्यता सिद्धान्त''(Theory of Multiple Intelligence) के अनुसार प्रत्येक बालक में किसी न किसी प्रकार की बुद्धिमत्ता होती है व उसमें उसे उच्च सीमा तक विकसित करने की क्षमता होती है, यदि अभिभावक या शिक्षक उस क्षमता को सही समय पर पहचानते हुए, उन्हें उचित प्रशिक्षण या मार्गदर्शन प्रदान करें। ये सभी प्रतिभायें बच्चों के प्रारंभिक काल में रहती है जिसे अधिकतम अधिगम समय(period of maximum learning) कहते हैं। यह जन्म-जात गुण बचपन के पारम्परिक खेल या पारिवारिक परिवेश, उसे विकसित करने का अवसर प्रदान करते हैं। **यह जन्म-जात गुण बचपन के पारम्परिक खेल या पारिवारिक परिवेश, उसे विकसित करने का अवसर प्रदान करते हैं।**

आज की शिक्षा-व्यवस्था का अध्ययन करने पर आभास होगा कि वर्ष-पर्यन्त विद्यार्थियों को अध्ययन, परीक्षा, शैक्षिक-गतिविधियों, सहशैक्षिक-गतिविधियों व अतिरिक्त शैक्षिक-गतिविधियों में अनिवार्य रूप से सहभागिता निभानी पड़ती है। यह आवश्यक भी है, क्योंकि बालक के विकसित होते मस्तिष्क पर सभी गतिविधियों का प्रभाव पड़ने लगता है। यह औपचारिक शिक्षा-व्यवस्था का आधार है। प्रत्येक कार्य कलाप का उसके मस्तिष्क में अध्यंकन (imprenting) होता रहता है, यही उसके भविष्य के व्यक्तित्त्व की आधारशिला होती है। बाल्यकाल में बालक जो सीखता है, अभ्यास करता है, उसका उसके मानस-पटल पर अमिट प्रभाव रहता है। विभिन्न शोधों से अध्यंकन (imprenting) के प्रभाव का महत्त्व भी प्रतिपादित होता है। अध्यंकन, एक अधिगम (learning) प्रक्रिया है, यह बालक के विकसित होते मस्तिष्क पर प्रभाव डालता है। इस अवधि में वह सबसे अधिक सीखता है, इसे समीक्षात्मक अवधि (critical period) कहते हैं। यह अवधि उसके विकसित होते मस्तिष्क पर दूरगामी प्रभाव डालती है। इस समय उसमें लघु अवधि अधिगम (Short-term learning) होता है, जिसका उसके दीर्घ अवधि अधिगम (Long-term learning) पर प्रभाव पड़ता है, यही उसके वैचारिक भावों को जाग्रत करता है। मनोवैज्ञानिक बुलेटिन (Psychological Bulletin, Vol (3) May 2005) के अनुसार-व्यवहारात्मक विकास (behavioural development), जीन-आनुवंशिकता (genetic inheritance), जन्मजात (congenital)गुण-लक्षणों, सांस्कृतिक सन्दर्भ (cultural context) तथा पैतृक क्रियाओं का परिणाम होता है। अब उद्विकासीय पारिस्थितकी (evolutionary ecology) ने एक और भागीदार की ओर संकेत दिया है, वह है, एपीजीनीय आनुवांशिकी (epigenetic inheritance)अर्थात् जीन से हटकर आनुवांशिकी, जो कि जीनीय अभिव्यक्ति पर प्रभाव डालती है। इससे बच्चों का व्यवहार परिवर्तित होती परिस्थितियों में अपने पैतृकों जैसा होता है, जबकि बच्चों ने ऐसा व्यवहार पहले अनुभव नहीं किया। मानसिकता, सोच व सामान्य व्यवहार आदि उसी का परिणाम है। अत: अध्ययन के दौरान पारम्परिक खेलों व खेल-गीतों का प्रभाव एपीजीनीय आनुवंशिकता में सहायक होता है व बालक के

भविष्य के व्यक्तित्त्व पर सकारात्मक व स्वनात्मक प्रभाव डालता है। इसी के आधार पर बालक विकास के पथ पर चलता है। अत: ग्रीष्मावकाश में बच्चों के नैसर्गिक गुणों के विकास के लिए उन्हें इन पारम्परिक खेलों की ओर अग्रसर होने देवें।

आजकल ग्रीष्मावकाश में एक नई परम्परा विकसित होती जा रही है, जैसे बच्चों का समर-कैंप या एक्टिविटी क्लासेस में भेजना, यह एक स्टेटस सिंबल होता जा रहा है। एक सप्ताह में बालक क्या हुनर सीख पायेगा? कहीं ऐसा करके अभिभावक बच्चों को मानसिक या भावनात्मक रूप से उलझा तो नहीं रहे हैं? मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त, ''विविध बोधगम्यता सिद्धान्त'' (Theory of Multiple Intelligence) के अनुसार प्रत्येक बालक में किसी न किसी प्रकार की बुद्धिमत्ता होती है व उसमें उसे उच्च सीमा तक विकसित करने की क्षमता होती है, यदि अभिभावक या शिक्षक उस क्षमता को सही समय पर पहचानते हुए, उन्हें उचित प्रशिक्षण या मार्गदर्शन प्रदान करें। ये सभी प्रतिभायें बच्चों के प्रारंभिक काल में रहती है जिसे अधिकतम अधिगम समय (period of maximum learning) कहते हैं। यह जन्म-जात गुण बचपन के पारम्परिक खेल या पारिवारिक परिवेश, उसे विकसित करने का अवसर प्रदान करते हैं। जैसे भाषा संबंधी बुद्धिमत्ता, बच्चों में कहानियाँ, जातक कथाएँ या लोकोक्तियाँ सुनने से विकसित होती हैं, जबकि तर्क-शक्ति, गणितीय-ज्ञान, बॉडी-काइनेस्थेटिक, इन्टरपर्सनल व इन्ट्रापर्सनल गुण, विभिन्न प्रकार के खेलों व खेल-गीतों से उसमें विकसित होते हैं। अत: विविध बोधगम्यता सिद्धान्त के अनुसार बालकों की मेधा की पहचान करें तभी उसमें उपस्थित

बहु-आयामी प्रतिभा के कुछ पक्ष, उसे उसी क्षेत्र की प्रवीणता तक ले जायेंगे।

वर्ष-पर्यन्त अध्ययन के बाद विद्यार्थी ग्रीष्मावकाश का बेसब्री से इंतजार करता है। पूर्व में इतनी सुविधाएँ व आर्थिक सम्पन्नता नहीं थी,इस कारण प्रवास, यात्रा, राज्य-दर्शन, भारत-दर्शन, वन-भ्रमण आदि की योजनाओं को बनाना दुष्कर था, परन्तु नाना-नानी के घर या रिश्तेदारों के घर जाने का प्रोग्राम बनता था, वहाँ जाकर विभिन्न खेल-खेले जाते थे। यदि हम 20 वर्ष पूर्व की बात करें तो गुल्ली-डन्डा, सितोलिया, आइस-पाइस, पिट्ठू, पिट्ठुल, लट्टू, पतंग उड़ाना, शतरंज, गुलेल से निशाना लगाना, रस्सी-कूद, कँचे, न जाने कितने खेल-खेले जाते थे, खेलों के साथ खेल-गीत भी होते थे, जैसे-

अक्कड़ बक्कड़ बम्बे बो, अस्सी नब्बे पूरे सौ
सौ में लागा धागा, चोर निकलकर भागा ...

यही बच्चे के व्यक्तित्त्व विकास का आधार बनता था। सम्पर्क, समन्वय, सामाजिक समरसता, बन्धुत्व की भावना का विकास होता था। सामूहिक खेलने से शारीरिक श्रम से बालक स्वस्थ रहते थे। खेल के मैदान नहीं मिलते तो किसी भी पेड़ के नीचे खेल का मैदान बना लेते, कोई पेड़ पर चढ़ रहा है, कोई तनों व शाखाओं पर झूम रहा है या विभिन्न प्रकार की अठखेलियाँ कर रहे हैं। इससे निडरता व निर्णय लेने की क्षमता का विकास होता था। दादा-दादी, नाना-नानी को भी इन्तजार रहता था कि हमारे बच्चे आयेंगे, घर-परिसर बच्चों की किलकारियों से खिल उठेगा क्योंकि संयुक्त परिवार में सामूहिक आनंद से सकारात्मक सोच विकसित होती है। ये साफ-सुथरे, ईमानदारी के खेल हैं जिनमें न तो कीमती साधन चाहिए, न कोई तामझाम, न खिलाड़ी की संख्या की अनिवार्यता, दो दोस्त मिले और खेल-गीतों के साथ खेल शुरु। इसके विभिन्न लाभ हैं, इनसे चुस्ती-फुर्ती के साथ-साथ मानसिक व भावनात्मक विकास भी होता है। कँचे पर निशाना साधने से एकाग्रता बढ़ती है। सितोलिया, पिट्ठू, पिट्ठुल में स्फूर्ति से दौड़ना, नजर चौकन्नी रखना, गुल्ली-डंडे में गणना करनी होती है, बच्चे चपल व फुर्तीले हो जाते हैं। इन सभी में सीख व सबक अपार हैं। इन पारम्परिक खेलों से ही जोड़-घटाना सीखने की शुरुआत होती है। इन खेलों के लिखित नियम नहीं हैं। लोक खेलों में कोई रणनीति नहीं होती है, इसलिए हर खिलाड़ी खेल व टीम भावना से खेलता है। खेल-गीत से सामुदायिक मनोरंजन तो होता ही है, साथ ही सामूहिकता, सहभागिता, सद्भाव, भ्रातृत्त्व भाव, संवेदनशीलता व सकारात्मक सोच का विकास भी होता है, यही सकारात्मक सोच बालक के व्यक्तित्त्व विकास की आधारशिला होती है। पारम्परिक खेलों से शारीरिक क्षमता, नेतृत्त्व के गुण, तर्कशक्ति, रचनात्मक सोच व सभी को साथ लेकर चलने की भावना का उदय होता है।

यही हमारे समाज की विषेषता है, इसी कारण देश ने अतीत में कई विदेशी आक्रान्ताओं के आघात सहन किये, परन्तु फिर भी अजेय होकर, समग्र विकास के कल्याण की ओर अग्रसर हो रहे हैं, जिसमें महत्त्वपूर्ण योगदान इन पारम्परिक खेलों का ही है, जो ग्रीष्मावकाश में खेले जाते थे। परन्तु अब परिदृश्य बदला है, बच्चे ग्रीष्मावकाश में नाना-नानी, दादा-दादी के यहाँ नहीं जाते, उन्हें तो मोबाइल से फुर्सत नहीं मिलती, दिन-भर उनकी दुनिया यही मोबाइल हो गई है। यदि सम्पन्न माता-पिता बच्चों को यात्रा या भारत-भ्रमण में ले भी जाते हैं तब भी वे मोबाइल में ही व्यस्त रहते हैं। बच्चे जब बुजुर्गों के सान्निध्य में रहते हैं तब उनके व्यक्तित्त्व विकास का आधार अनौपचारिक शिक्षा होती है, जो घर के अग्रजों द्वारा उन्हें प्रदान की जाती है। परन्तु पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव से संयुक्त परिवार की प्रथा टूटी, एकल परिवार व्यवस्था पनपने लगी। तभी मैगी व त्वरित भोजन ने परिवारों में प्रवेश किया। ग्रीष्मावकाश के अवसर पर बच्चे संयुक्त परिवार में अपने सभी भाई-बहनों, चाचा-चाची आदि के साथ सुबह-शाम जीवन व्यतीत कर उनके वर्षों के अनुभवों का लाभ उठाते थे। जीवन के गूढ़तम रहस्यों को वे बातों-बातों में ही समझा देते थे।

बच्चों में छिपी प्रतिभा का चयन करते थे, उनके कार्य कलापों व व्यवहार के आधार पर। घर का यदि कोई पारम्परिक कार्य है तो उसका अनुभव भी उन्हें कराते ताकि भावी जीवन में वह घर के पारम्परिक व्यवसाय को अपना कर अपना जीवन निर्वाह कर सकें, जिसे आज हम कौशल विकास का नाम दे रहे हैं। संयुक्त परिवार में दादा-दादी, नाना-नानी की कहानियाँ, हितोपदेश कथाओं, जातक कथाओं, पंचतंत्र की कहानियाँ, ये सभी ज्ञान की पवित्र-गंगा हैं, जिनके स्मरण से ही मस्तिष्क, मन व आचरण की पवित्रता सामने आती हैं। इनके

द्वारा ज्ञान का सम्प्रेषण, व्यक्तित्त्व विकास के साथ-साथ बालक के भविष्य की आधारशिला भी, उसी बालक के शैशव काल में रखी जाती हैं। आज भी कुछ संयुक्त परिवार में अग्रजों का उचित स्थान होने के कारण विकसित होते बालक के मस्तिष्क पर उनके द्वारा ग्रीष्मावकाश की चाँदनी रात्रि में कही गई कहानियों, कविताओं, महापुरुषों की जीवनियों आदि का प्रभाव पड़ता है। बालक स्वाभाविक रूप से दादा-दादी, नाना-नानी से जिज्ञासा-समाधान कर सकता है। यही उसके वैचारिक आधार व तर्कशक्ति को बल प्रदान करता है। यह सभी अनौपचारिक शिक्षा द्वारा प्रदत्त है, जबकि औपचारिक शिक्षा तो वह वर्ष भर विद्यालय में प्राप्त करता है। आज के विद्यार्थी का जीवन यांत्रिक जीवन (mechanic life)हो गया है, सारी दिनचर्या स्कूल और पढ़ाई के साथ तय होती है- ओह! छह बज गये; उठो स्कूल जाना है। पाँच बज गये, ट्यूशन पर जाना है, फिर होम वर्क करना है। हमने शारीरिक सक्रियता व श्रम की गुंजाइश ही नहीं छोड़ी है। बच्चों की सारी दौड़ अंकों के लिए हो गई है, इसलिए उसके पास मैदान में क्रीड़ा करने का समय ही नहीं है। माता-पिता का दबाव, शिखर पर रहने व कॅरियर बनाने का रहता है। इसी कारण बच्चा अवसाद-ग्रस्त हो जाता है। गर्मियों की छुट्टियों में बच्चे परिवारों में जायें, ताकि वे रिश्तों को पहचाने, उसमें घुले-मिले; प्रेम, स्नेह व लगाव को महसूस करें, यह जुड़ाव उन्हें जीवन में कभी अकेला नहीं पड़ने देगा। हमें बच्चों का किताब-केन्द्रित नहीं रखना है, गर्मी की छुट्टियों में उन्हें हम आत्मनिर्भर व जागरूक नागरिक होने की प्रेरणा भी दें। इस समय उन्हें तैराकी, चित्रकला, सिलाई, कढ़ाई, बुनाई, नृत्य, गायन, वाद्य-यंत्रों के उपयोग, योगाभ्यास व विभिन्न परम्परागत खेलों आदि की शिक्षा या प्रशिक्षण प्रदान करावें। किशोर वय में काम करने को प्रेरित करें यही, श्रम-साध्य भाव उसे भावी जीवन के पथ पर अजेय होकर विचरण करने देगा। आज के इस आधुनिक युग में, नये खेलों ने अपना रंग जमाना प्रारम्भ कर दिया है, इसी कारण कहा जाता है कि गुल्ली-कंचे अच्छे बच्चे नहीं खेलते हैं। अधिकांश लोग इन्हें बिसरा चुके हैं क्योंकि गुल्ली-डन्डे का स्थान क्रिकेट ने ले लिया है। पारम्परिक खेलों से नई पीढ़ी दूर जा रही है इसी कारण पहले साथी छूटे, फिर मैदान छूट गये, श्रम, कलाबाजियाँ, अठखेलियाँ छूटी; जबकि माटी से जुड़े इन खेलों के पीछे का विज्ञान भी मनोविज्ञान है, इसी के आधार पर बालक जीवन के हर पहलू को बेहतर बनाने की वैज्ञानिक, भावनात्मक, रचनात्मक व सकारात्मक कला में प्रवीणता प्राप्त कर लेता है। इन खेलों द्वारा अध्यंकन (imprenting) के माध्यम से उसके भावी जीवन की आधार शिला रखी जाती है, उसी से उसका व्यक्तित्त्व विकास होकर समग्र कल्याण की बात को ग्रहण करता है। अत: ग्रीष्मावकाश में बच्चों को पारम्परिक खेल व खेल-गीतों की ओर प्रेरित करें। ❑

(विभागाध्यक्ष, पर्यावरण विज्ञान विभाग, सरगुजा विश्वविद्यालय, अम्बिकापुर, छत्तीसगढ़)

खेल और बचपन एक दूसरे के पूरक हैं। खेल से बच्चे तनाव मुक्त ही नहीं होते बल्कि इससे धैर्य, सहयोग, सहनशीलता, भाईचारा भी सीखते हैं। खेलों से उनकी आन्तरिक शक्तियाँ, कौशल और शारीरिक क्षमता प्रकट होती है। ग्रीष्मावकाश में बच्चों पर पढ़ाई का बोझ कम होता है, ऐसे में खेलों के माध्यम से बच्चों की प्रतिभा में निखार लाया जा सकता है। उनकी महत्त्वाकाँक्षाओं को पूरा करने में मदद मिलेगी और वे जीवन में कभी हीन भावना से ग्रस्त नहीं होगें। भारतीय पारम्परिक खेलों के लिए प्राकृतिक साधन हर जगह उपलब्ध होते हैं। इन खेलों से बच्चों में सजगता, चपलता चुस्ती-फुर्ती, पूर्वानुमान, निरीक्षण जैसे गुणों का स्वत: विकास होता है। हमारे पारम्परिक खेल धीरे-धीरे ग्रामीण बच्चों के जीवन से भी लुप्त होते जा रहे हैं। ग्रीष्मावकाश में इनके माध्यम से बालकों का विकास व परम्पराओं का रक्षण हो सकेगा।

बालकों का बहुमुखी विकास ग्रीष्मावकाश में संभव

❑ **डॉ. रेखा भट्ट**

वर्तमान विद्यालयी शिक्षण द्वारा बच्चे केवल पुस्तकीय ज्ञान प्राप्त कर, रटने की योग्यता प्राप्त करते हैं। यह स्कूली शिक्षा केवल सूचनाओं और जानकारियों को स्मरण कराने की क्षमता पर केन्द्रित है, जो केवल रोजगार प्राप्त करने के लिए प्रतियोगी तैयार करती है। आधुनिक शिक्षण में यह दृष्टिकोण विकसित ही नहीं हो पाया कि- शिक्षार्थी का राष्ट्र के प्रति क्या दायित्व है? ऐसी शिक्षा शिक्षार्थी को समाज व राष्ट्र में परिवर्तन के लिए आवश्यक दृढ़ता और विचार शक्ति प्रदान नहीं करती है। बालक के व्यवहार और उसे समाजोपयोगी एवं कल्याणकारी बनाने का उद्देश्य विद्यालयी शिक्षा से पूर्ण नहीं होता है।

बच्चों में संवेदनशीलता व सकारात्मकता की भावना नियमित विद्यालयी गतिविधियों में पल्लवित होना संभव नहीं होता। वह कक्षा-कक्ष की जटिल प्रक्रिया में समस्याओं के समाधान प्राप्त नहीं कर सकता। वर्तमान शिक्षा विद्यार्थी को बौद्धिक रूप से सक्षम बनाते हुए आर्थिक सुरक्षा प्रदान करती है किन्तु उसे मनोवैज्ञानिक दृष्टि से सुदृढ़ बनाकर आत्मिक सुरक्षा प्रदान नहीं करती। शैक्षणिक परीक्षा में उत्तीर्ण हो कर वह स्वयं को पूर्ण रूप से योग्य मानता है।

वास्तव में बच्चे अपनी रुचि, सोच एवं अभिवृत्ति के अनुरूप ही सीखते हैं। बच्चे को क्या सिखाया जाना है? यह सब आजकल पहले तय किया जाता है। किन्तु बच्चों की भी अपनी आकाँक्षाएँ होती है, उनकी अपनी सपनों की दुनिया होती है। उन कल्पनाओं को उड़ान भरने का अवसर ग्रीष्मावकाश में ही प्राप्त होता है। शिक्षण के अतिरिक्त दिया गया समय बालक के भावी जीवन का आधार होता है। इस अवकाश के दौरान बालक शिक्षण परिसर से बाहर, पढ़न-पाठन, चुनौतियों, सिद्धान्तों, संकल्पनाओं से अलग रचनात्मक एवं व्यावहारिक ज्ञान सीखता है।

अभिभावक ग्रीष्मावकाश में भी बच्चों को बहुत ज्यादा सिखाने का प्रयास करते हैं। उन पर मल्टीटास्किंग का दबाव रहता है। इलेक्ट्रॉनिक कम्प्युटराइज्ड गैजेस्ट्स की तेज रफ्तार, मशीनी जिन्दगी बच्चों के स्वाभाविक हुनर को विकसित नहीं होने देते। बच्चों को गर्मी की छुट्टियाँ छोटी व तेज रफ्तार की प्रतीत होती है। आज बच्चों की पसन्द ना पसन्द के सभी विकल्प उपलब्ध है। अभिभावक भी उनकी हर माँग को पूरा करने का प्रयास करते हैं। घर में बैठकर कम्प्यूटर, लेपटॉप, मोबाइल पर गेम्स द्वारा बौद्धिक क्षमता बढ़ाने को

ज्यादा महत्त्व दिया जाता है। जीवन की अन्य क्षमताओं को अनुपयोगी समझते हैं। फुर्सत के पलों में भी बालकों को स्वत: सीखने की स्वतंत्रता नहीं होती, बच्चे तनाव में सीखते हैं और यहाँ भी उन्हें असफलता भयभीत करती है। असफलता भी उपलब्धि की ही एक सीढ़ी है, इस अवकाश अवधि को जीवन में कुछ नया जोड़ने एवं अन्य कमियों को सुधारने के अवसर के रूप में देखा जाना चाहिये। एकल परिवारों में बच्चों को सदैव प्रोत्साहन के रूप में प्रशंसा प्राप्त करने की आदत हो जाती है और उनमें एकाधिकार की भावना पनपती है। छोटे से स्नेह, बड़ों का आदर, आपसी सहयोग, आपस में अपनी चीजें साझा करना जैसे बच्चों के नैसर्गिक गुण विकसित नहीं हो पाते हैं।

आधुनिकता की प्रतिस्पर्धा में कामकाजी अभिभावक टीवी पर कार्टून चरित्रों के सीरियल्स में बच्चों को व्यस्त रखते हैं। इससे बच्चों में हिंसा, तिरस्कार और दिखावा जैसे नकारात्मक प्रभाव पनपते हैं। बच्चे अनजाने में ही अभद्र भाषा और अभद्र व्यवहार सीख जाते हैं। टी.वी., विडियो, इन्टरनेट के अधिक प्रयोग से शहरी बच्चे अनिद्रा की बीमारी से ग्रस्त, हिंसक एवं आक्रामक बनते जा रहे हैं। सोशल मीडिया में अत्यधिक व्यस्त होते हुए भी बच्चे आत्म केन्द्रित और असामाजिक होते जा रहे हैं। परस्पर संवाद और संवेदनशीलता वर्तमान पीढ़ी से लुप्त हो रही है। तकनीकी निपुणता आधुनिक समय की आवश्यकता है किन्तु यह अभिभावक व शिक्षकों का दायित्व है कि इसके अच्छे व बुरे दोनों पहलुओं से उन्हें अवगत करायें।

घरेलू कार्यों के माध्यम से बच्चे व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करते हैं। आजकल घरेलू कार्यों को कमतर आकाँ जाता है जबकि यह उनके व्यक्तित्व के विकास का आवश्यक हिस्सा है। इन कार्यों से बच्चें जिम्मेदारी, समय-पालन, श्रम का महत्त्व समझेंगे। साथ ही परिवार के प्रति कर्तव्य भाव, समर्पण, सहयोग का भाव जाग्रत होगा। बच्चे आत्मविश्वासी, स्वावलम्बी और मेहनतकश बनेंगे। जिस कौशल विकास के लिए योजनाएँ बनानी पड़ रही है, वह कौशल परम्परागत रूप से भारतीय परिवारों में पीढ़ियों से चला रहा है। यदि बच्चों को घरों में चलने वाले लघु-कुटीर व हस्तकला का अभ्यास अवकाश के दौरान प्राप्त होगा तो वे भविष्य में उद्यमिता और व्यवसाय को कॅरियर के रूप में विकसित कर पायेंगे। सीमित खर्च और बचत की उपयोगिता की समझ बढ़ेगी और हमारी अर्थव्यवस्था को सुरक्षित आधार भी प्राप्त हो सकेगा।

एकल परिवारों में बच्चों में आत्मीयता, निष्ठा, कमठता, सेवाभाव जैसे गुणों का विकास नहीं हो पाता है। संयुक्त परिवारों में ये संस्कार बालकों में स्वत: आत्मसात् होते रहते हैं। बुजुर्ग और अनुभवी वरिष्ठ पारिवारिक सदस्यों के निर्देशन से बच्चे व्यावहारिक जानकारियाँ प्राप्त कर लेते हैं। उनका भाषायी ज्ञान बढ़ता है। रचनात्मकता और वैचारिक दृढ़ता विकसित होती है। बौद्धिक एवं भावनात्मक स्तर का समान विकास होने से उनकी मनोवैज्ञानिक समस्याओं का समाधान प्राप्त होता रहता है। संयुक्त परिवारों में बच्चे आज्ञाकारिता, सेवाभाव, बड़ों का आदर करना, स्नेह, अनुशासन जैसे गुणों को सीखते हैं। यह एकल परिवारों में संभव नहीं हो पाता है। अत: ग्रीष्मावकाश में कुछ समय दादा-दादी, नाना-नानी के साथ गुजरेगा तो बालक बहुत कुछ सीख सकेंगे।

अवकाश के क्षणों में कथा-कहानियों की पुस्तकें बालकों को श्रेष्ठ साथी सिद्ध होती है। इनके माध्यम से वे अपने इर्द-गिर्द बेहद मनोरंजक और रोचक संसार बुन लेते हैं। जहाँ आधुनिक इलेक्ट्रॉनिक गैजेट्स थकाने वाले एवं ऊबाऊ होते हैं वहीं पुस्तकों के माध्यम से बालक राष्ट्र भक्ति, महापुरुषों की जीवनियों से प्रेरणा, उत्कृष्ट जीवन मूल्य सीखते हैं। अवकाश में बालकों को पुस्तकालय, वाचनालय से जोड़ना सबसे आसान है। उन्हें स्वयं का पुस्तकालय विकसित करने को प्रेरित किया जा सकता है। वे इनके माध्यम से जीवन में उत्कृष्ट, जीवन मूल्यों को चरितार्थ कर सकेंगे।

ग्रीष्मावकाश में जीवनोपयोगी-सामाजिक गतिविधियों के माध्यम से बालकों के व्यक्तित्व का विकास किया जा सकता

है। वर्तमान में विभिन्न संस्थाओं में नियुक्तियों में व्यक्तित्व परीक्षण एक आवश्यक और अहम प्रक्रिया है। निजी संस्थाओं, उद्योगों तथा कम्पनियों में, उम्मीदारों के चयन में, उनकी योग्यता क्षमता और उत्पादकता बढ़ाने में सहभागिता को आँका जाता है। बुजुर्गों, बच्चों, महिलाओं, विकलांगों व अन्य पिछड़े वर्गों के लिए किये गये सामाजिक कार्यों को रोजगार में सफलता का हिस्सा माना जाता है। ग्रीष्मावकाश में बालकों को सामाजिक कार्यों के लिए प्रेरित किया जा सकता है। सेवा कार्यों-शिविरों से उनमें सामाजिक चेतना और व्यक्तित्त्व का विकास होगा। इससे बालक अपने लाभ और स्वार्थ तक सीमित नहीं रहता वरन् उसमें समाज और परिवार के दायित्व निर्वहन हेतु सहिष्णुता उदारता सदाशयता स्नेह का दृष्टिकोण विकसित होता है। दया, करुणा, प्रेम, त्याग, सेवा जैसे शाश्वत जीवन मूल्यों द्वारा उनके व्यक्तित्त्व का विकास पुस्तकीय शिक्षण से अधिक उपयोगी है।

आज ग्रामीण व नगरीय पर्यावरण के प्रति बालकों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करना आवश्यक है। स्वच्छता, जल संरक्षण, वृक्षारोपण, विद्युत की बचत, प्रदूषण के खतरों से बचाव, जैसे स्थानीय, राष्ट्रीय और वैश्विक संकटों पर चर्चा करना, उन्हें जागरूक करना आवश्यक है। बच्चे देखकर अनुसरण करते हैं इसलिए हमें स्वयं पर्यावरण संरक्षण, स्वच्छता, जल संरक्षण, पानी व बिजली की बचत के उदाहरण प्रस्तुत करने होंगे।

खेल और बचपन एक दूसरे के पूरक हैं। खेल से बच्चे तनाव मुक्त ही नहीं होते बल्कि इससे धैर्य, सहयोग, सहनशीलता, भाईचारा भी सीखते हैं। खेलों से उनकी आन्तरिक शक्तियाँ, कौशल और शारीरिक क्षमता प्रकट होती है। ग्रीष्मावकाश में बच्चों पर पढ़ाई का बोझ कम होता है, ऐसे में खेलों के माध्यम से बच्चों की प्रतिभा में निखार लाया जा सकता है। उनकी

महत्त्वाकाँक्षाओं को पूरा करने में मदद मिलेगी और वे जीवन में कभी हीन भावना से ग्रस्त नहीं होगें। भारतीय पारम्परिक खेलों के लिए प्राकृतिक साधन हर जगह उपलब्ध होते हैं। इन खेलों से बच्चों में सजगता, चपलता चुस्ती-फुर्ती, पूर्वानुमान, निरीक्षण जैसे गुणों का स्वत: विकास होता है। हमारे पारम्परिक खेल धीरे-धीरे ग्रामीण बच्चों के जीवन से भी लुप्त होते जा रहे हैं। ग्रीष्मावकाश में इनके माध्यम से बालकों का विकास व परम्पराओं का रक्षण हो सकेगा।

स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क निवास करता है। आधुनिक तनावपूर्ण, प्रतिस्पर्धात्मक जीवन शैली में बच्चों को एकाग्र, शान्तचित्त, प्रसन्न, नीरोगी बनाये रखने का सबसे उत्तम माध्यम है-योग। जीवन में संघर्ष की क्षमता, सकारात्मकता, आत्म संयमी, आत्मकेन्द्रित बनाने का सबसे सरल माध्यम योग ही है।

पर्यटन के माध्यम से बालकों में भौगोलिक ज्ञान की वृद्धि होती है। आधुनिक शिक्षा पद्धति और जीवन शैली ने बच्चों को प्रकृति से दूर कर दिया है। पशु-पक्षियों को देखना, सुनना तथा प्राकृतिक वातावरण से आधुनिक पीढ़ी दूर है। युवा विद्यार्थी ग्रीष्मावकाश में पर्यटन के साथ-साथ पर्वतारोहण, रिवर राफ्टिंग, एडवेंचर, पैराग्लाइडिंग जैसे साहसिक कार्यों का लाभ उठा सकते हैं। ग्रीष्मावकाश में पर्यटन के माध्यम से बालकों में राष्ट्रीय एकता का भाव भी विकसित होता है।

भारत में शिक्षा द्वारा रोजगार और अर्थोपार्जन को प्रतिष्ठित और सुरक्षित माना जाता है। अध्ययन के अतिरिक्त अपनी रुचि और प्रतिभा को प्रकट करने, खेल, कला, साहित्य के क्षेत्र में आगे बढ़ने का साहस और संघर्ष करना पड़ता है।

वर्तमान में ग्रीष्मावकाश को पूरी तरह गृह कार्य, अग्रिम कक्षा की परीक्षा की तैयारी के लिए निर्धारित कर दिया गया है, ऐसे में ही ग्रीष्मावकाश के 40 दिन की अवधि गुजर जाती है। बच्चे अभिभावकों की अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए प्रतियोगिताओं के बोझ को वहन करते हैं। अपनी क्षमता और सामर्थ्य से अधिक बोझ के कारण उनका शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक विकास अवरुद्ध हो जाता है। बालकों की सहज, सरल, क्रियात्मकता और विचारशीलता समाप्त हो जाती है।

समाज की आवश्यकताओं और विकास को, व्यक्ति के दायित्वों से जोड़ने का काम शिक्षा करती है किन्तु शिक्षा के इन उद्देश्यों की पूर्ति तभी हो सकती है जब शिक्षा को बालक की रुचि, स्वभाव और सामाजिकता से जोड़ें और उनके नैसर्गिक गुणों व प्रतिभाओं को विकसित कर एक उत्तरदायी नगारिक बनायें। इस हेतु शिक्षा के साथ सीखने की महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया बाल्यकाल से ही प्रारम्भ हो जाती है अत: प्राथमिक स्तर से ही बालकों के ग्रीष्मवकाश का सदुपयोग करने से उनका बहुमुखी विकास संभव हो सकेगा।❑

(व्याख्याता, रसायन विज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर)

सार्थक ग्रीष्मावकाश

आज बच्चों को पैसा कमाने की मशीन बनाने की ओर ध्यान अधिक दिया जाता है। बोर्ड परीक्षा समाप्त होते ही बच्चे को मेडीकल व इंजीनियरिंग की प्रवेश परीक्षा की तैयारी करने में कोटा या अन्यत्र भेज दिया जाता है। छुट्टियों के उपभोग को समय व्यर्थ करना माना जाता है। बच्चे में उत्पन्न तनाव को अभिभावक भाँप नहीं पाते या लक्ष्य के लिए कठिन मेहनत का उपदेश दे उसे अनदेखा करते हैं। बच्चों द्वारा की जा रही आत्महत्याएँ उस अनदेखेपन का ही परिणाम है। व्यक्ति के जीवन को एक अन्तहीन प्रतियोगिता में बदलना किसी सभ्य समाज के हित में नहीं है। भारत की नई सरकार ने कौशल विकास व अन्य कई कार्यक्रम चला कर स्थिति को बदलने का प्रयास प्रारम्भ किया है। देखना यह है कि वे जीवन के स्वाभाविक अंग बन पाते हैं या मात्र औपचारिक आँकड़े बन कर रह जाते हैं।

❑ विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी

भारत में गुरुकुल व्यवस्था में, सम्भवतः, ग्रीष्मावकाश जैसी कोई व्यवस्था नहीं रही होगी। बच्चा सम्पूर्ण बाल्यकाल गुरु के सानिध्य में बिताने के लिए ही गुरुकुल में प्रवेश लेता था। अमेरिका व अन्य देशों में भी उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक विद्यालय पूरे वर्ष चलते थे। शिक्षा की वर्तमान विद्यालयी व्यवस्था प्रारम्भ होने के बाद धीरे धीरे ग्रीष्मावकाश की व्यवस्था लागू हुई होगी।

आवश्यक है ग्रीष्मावकाश

विद्यालयी व्यवस्था का एक आवश्यक भाग है ग्रीष्मावकाश। भारत के विभिन्न राज्यों में भौगोलिक अन्तर से उत्पन्न मौसमी प्रतिकूलता के कारण समय में कुछ अन्तर के साथ ग्रीष्मावकाश सभी जगह उपस्थित है। 6 से 12 सप्ताह का ग्रीष्मावकाश विश्वव्यापी है। ग्रीष्मावकाश करने का कारण प्रशासनिक के साथ साथ मनोवैज्ञानिक भी माना जाता है। वार्षिक परीक्षा के बाद परीक्षा परिणाम तैयार करने के बाद अगले सत्र को प्रारम्भ करने हेतु शिक्षकों को शिक्षण कार्य से मुक्त करना आवश्यक होता है। ग्रीष्मावकाश का मनोवैज्ञानिक पक्ष कहता है कि शिक्षा ग्रहण करते समय बच्चे को मानसिक थकान आती है। उस मानसिक थकान से बचाने के लिए कुछ अवधि के लिए शिक्षण कार्य से मुक्त किया जाना बच्चे के समुचित विकास के लिए आवश्यक है।

ग्रीष्मावकाश बच्चे को परिवार से दूर रहने, समय की पाबंदी, अनुशासन की बंदिशें, प्रतिस्पर्धा, परिणाम की अनिश्चतता, स्कूली गेंगबाजी, गृहकार्य आदि के कारण उत्पन्न तनावों से भी मुक्त करता है।

यह बात शिक्षकों के ऊपर भी लागू होती है। शिक्षण की एकरसता से उत्पन्न खीज को नष्ट करने के लिए शिक्षकों को कुछ अवधि के लिए शिक्षण से मुक्त किया जाना चाहिए। अभिभावक भी छुट्टियाँ चाहते हैं मगर बच्चों के स्कूल के चलते वे कहीं जा नहीं पाते। किसी ठण्डे स्थान पर जाकर कुछ दिन बिताने के लिए वे भी ग्रीष्मावकाश का इन्तजार करते हैं। मगर ऐसे अभिभावक हर बच्चे को सुलभ नहीं होते। अधिकांश बच्चों के लिए ग्रीष्मावकाश से उत्पन्न रिक्तता को भरने का विकल्प नहीं होता और वे बोरियत अनुभव करने लगते हैं।

अमेरिका में ग्रीष्मावकाश की उत्पति का कारण कृषि कार्य से जुड़ा माना जाता है। कहते हैं कि अमेरिका ने जब संयुक्त राज्य का रूप ग्रहण किया तब इस बात का ध्यान रखा गया कि विद्यालयी व्यवस्था ऐसी हो कि बच्चे कृषि कार्यों में घर वालों का साथ दे सकें। भारत में भी विद्यालयी अवकाश को कृषि की आवश्यकताओं के साथ जोड़ने की माँग उठती रही है प्रयास भी किए गए पर सफलता नहीं मिली। समय के साथ शहरी व्यवस्था मजबूत होती गई और कृषि की माँग हल्की होती चली गई।

ग्रीष्मावकाश की आलोचना

ग्रीष्मावकाश की आलोचना भी होती रही है। ग्रीष्मावकाश को ग्रीष्म-अधिगम-हानि भी कहने वालों की कमी नहीं है। इनका मानना है कि सत्र में जो सिखाया जाता है बच्चे ग्रीष्मावकाश में उसका अधिकांश भूल जाते हैं। अमेरिकी विद्यार्थियों के शिक्षा में पिछड़ने का भाण्डा भी ग्रीष्मावकाश पर फोड़ा जाने लगा है। अमेरिका में शिक्षण 180 दिन व ग्रीष्मावकाश अवधि 12 सप्ताह तक की होती है। एशिया में शिक्षण 250 दिन ग्रीष्मावकाश मात्र 6 सप्ताह का ही होता है। आलोचकों का मानना है कि अध्ययन का अधिक समय ही अच्छी उपलब्धि दिला सकता है। इसी कारण भारत में प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी करने वाले लाखों विद्यार्थी ग्रीष्मावकाश कोचिंग कक्षाओं में गुजारते हैं। वातानुकूलित कक्षा कक्ष व उत्तम यातायात के साधने के बल पर गर्मी को नकारते हुए वे अपना अध्ययन जारी रखते हैं।

विकसित देशों में ग्रीष्मावकाश में बच्चों को, अध्ययन के अतिरिक्त, विविध प्रकार के अनुभव कराने के लिए अनेक प्रकार के कैम्पों का आयोजन किया जाता है। इसमें स्वयंसेवी संस्थाएँ, सरकार व अभिभावक सभी खर्च को वहन करने के लिए तैयार रहते हैं। भारत में यह लाभ मात्र नाममात्र के कुछ ही बच्चों को मिल पाता है। अधिकांश बच्चे गाँव-गलियों में घूम कर ही जैसे तैसे अपना समय गुजारने को मजबूर होते हैं। शहरों व कस्बों में ऐसे स्थान भी नहीं बचे जहाँ बच्चे ठीक तरह खेल सके। सड़क पर खेलने का प्रयास करने पर आस-पास के लोगों द्वारा, अपने जीवन में व्यवधान मानकर, बच्चों को वहाँ से धकेल दिया जाता है। शहरी क्षेत्रों में अधिकांश विद्यालयों के पास अपने खेल के मैदान भी नहीं है। स्थानीय प्रशासन शायद ही इस विषय में सोचता है। घर के पास खेलने का उचित स्थान नहीं हो तो बच्चे खेले तो कहाँ?

ग्रीष्मावकाश-शिविर

भारत में स्काउट व गाइड संस्था द्वारा ग्रीष्मावकाश में कौशल व अभिरुचि विकास शिविर लगाए जाते हैं। इन शिविरों में बच्चों को विभिन्न प्रकार के हस्तशिल्प सिखाने व साहित्यिक व सांस्कृतिक गतिविधियों को आयोजित करने का अवसर दिया जाता है। अनेक वर्षों से निरन्तर आयोजित होने के कारण ये शिविर लोकप्रिय हो चुके हैं। राजस्थान में तो प्रतिवर्ष सैंकड़ों ऐसे शिविर लगते हैं। सीमित साधनों के कारण एक शिविर में लाभार्थियों की संख्या सैंकड़ों के आसपास ही रह पाती है। कुल बच्चों की संख्या को देखते हुए यह सुविधा नगण्य ही मानी जाएगी। अन्य संस्थाएँ भी सशुल्क ऐसे आयोजन करने लगी हैं, शुल्क नहीं चुका पाने के कारण आम बच्चे उनका लाभ नहीं उठा पाते।

हम छोटी उम्र में ही बच्चे को पूर्ण विकसित मान लेते हैं, सत्य यह है कि व्यक्ति का मस्तिष्क का विकास 20 वर्ष की उम्र के बाद ही पूर्ण विकसित हो पाता है। अस्पष्ट सूचनाओं का विश्लेषण कर निर्णय निकालने या किसी व्यक्ति के मन की बात को समझने की क्षमता बच्चों में नहीं होती। बच्चों को खतरों से खेलने में आनन्द आता है। खेलों व अन्य माध्यमों से उन्हें यह सुख उपलब्ध कराया जाना चाहिए। छुट्टियाँ इसमें सहायक हो सकती है। ऐसा नहीं होने पर बच्चे नशावृत्ति में सुख ढूँढ़ लेते हैं। युवाओं में नशे व अपराध करने की बढ़ती प्रवृति को इससे जोड़ कर देखा जाना चाहिए।

आज बच्चों को पैसा कमाने की मशीन बनाने की ओर ध्यान अधिक दिया जाता है। बोर्ड परीक्षा समाप्त होते ही बच्चे को मेडीकल व इंजीनियरिंग की प्रवेश परीक्षा की तैयारी करने में कोटा या अन्यत्र भेज दिया जाता है। छुट्टियों के उपभोग को समय व्यर्थ करना माना जाता है। बच्चे में उत्पन्न तनाव को अभिभावक भाँप नहीं पाते या लक्ष्य के लिए कठिन मेहनत का उपदेश दे उसे अनदेखा करते हैं। बच्चों द्वारा की जा रही आत्महत्याएँ उस अनदेखेपन का ही परिणाम है। कोटा में जीवविज्ञान प्रायोगिक परीक्षा लेते समय मैंने अनुभव किया है कई बच्चों की मानसिक अवस्था सही नहीं थी। पढ़ाई के नाम पर अत्यधिक तनाव सहकर बने डॉक्टर-इंजीनियर संवेदनहीन, पैसे कमाने की मशीन ही साबित हो रहे हैं। व्यक्ति के जीवन को एक अन्तहीन प्रतियोगिता में बदलना किसी सभ्य समाज के हित में नहीं है। भारत की नई सरकार ने कौशल विकास व अन्य कई कार्यक्रम चला कर स्थिति को बदलने का प्रयास प्रारम्भ किया है। देखना यह है कि वे जीवन के स्वाभाविक अंग बन पाते हैं या मात्र औपचारिक आँकड़े बन कर रह जाते हैं। ❑

(बाल एवं विज्ञान विषयक लेखक)

ग्रीष्मावकाश और छात्र

ग्रीष्म ऋतु के लंबे अवकाश में छात्रों के ऊपर से पढ़ाई का भार कम हो जाता है। ऐसे में वह कुछ और उपयोगी कार्य करना व सीखना चाहता है। वह भाषण, लेखन, कविता और ऐसे तमाम विधाओं में दक्ष हो सकता है, यदि अपने मिले समय का सही उपयोग करे। यदि किशोर मन अपने कर्तव्य का समुचित रूप से पालन करे और उसकी, सही समय-समय पर समीक्षा और विवेचना होती रहे तो हम उसके अन्दर छिपी प्रतिभा और गुणों का आसानी से विकसित कर सकते हैं। सच पूछा जाए तो ग्रीष्म अवकाश छात्र-छात्राओं के लिए अपनी छिपी प्रतिभा को उजागर करने का सही और उपर्युक्त अवसर देता है।

❑ **बजरंगी सिंह**

हमारे जीवन में प्रकृति के सभी रंगों और उसकी सुंदरता का गहरा संबध है। यही प्रकृति पग-पग पर अपना सौंदर्य बिखेरती हुई चलती है। भारत वर्ष में प्रकृति की लीला अद्भुत है। यहाँ पर छह ऋतुएँ बारी-बारी से पृथ्वी को ही नहीं अपितु मनुष्य को भी प्रभावित करती है और मनुष्य को अमूल्य उपहार देकर चली जाती है। इसलिए प्रकृति और मनुष्य का अन्योन्याश्रित संबंध है। एक दूसरे के अभाव में दोनों ही सौंदर्यहीन है। इसलिए हमे प्रकृति द्वारा प्रदत्त ऋतुओं का आनंद उठाना चाहिए और उसकी उपादेयता को जीवन से जोड़कर जीवन को प्रसन्न और सुखद बनाएँ, ऐसा हमारा निरंतर प्रयास होना चाहिए। तभी जीवन को सफल और गुणवत्ता पूर्ण बनाया जा सकता है।

ग्रीष्म ऋतु जहाँ कष्टदायी है, वहीं हमारे जीवन के लिए उपयोगी भी है। इसी ऋतु में किसान की फसलें पकती हैं। कई तरह के फल और वस्तुएँ तैयार होती हैं, जो मनुष्य के लिए स्वास्थ्य की दृष्टि से लाभदायक होते हैं। उसका लाभ हमारे छात्र भी ग्रीष्म ऋतु की लंबी छुट्टी में खूब उठाते हैं, स्वस्थ रहते हैं। इसी ऋतु में पहाड़ों की बर्फ पिघलकर नदियों और झरनों में परिवर्तित हो जाती है, जिसकी छटा देखते ही बनती है। यही जल हमारे जीवन के लिए उपयोगी साबित होते हैं। ग्रीष्म ऋतु ही वर्षा ऋतु के आगमन की तैयारी करती है। ग्रीष्म ऋतु हमें कष्ट सहने की क्षमता भी प्रदान करती है। इससे हमें प्रेरणा मिलती है कि मनुष्य को कष्टों और कठिनाइयों से घबराना नहीं चाहिए। उस पर विजय प्राप्त करने का यत्न करना चाहिए और यह भी स्मरण रखना चाहिए कि जिस प्रकार जीवन में कष्टों के बाद सुख का समय अवश्य आता है, इसी तरह ग्रीष्म ऋतु के बाद वर्षा ऋतु जीवन को सुखद और प्रफुल्लित बना देती है। छात्रों को इससे अपने जीवन में सबक सीखना चाहिए और उसका अनुसरण भी सतत करते रहना चाहिए, ताकि भविष्य का मार्ग प्रशस्त हो सके। मेरा मानना है कि ग्रीष्म ऋतु एक ऐसा सुअवसर है जिसको गँवाना मूर्खता होगी। मनुष्य के जीवन में हजारों विकल्प है। देखना यह है कि आप किसके लिए तैयार हैं। जो कार्य आपको अधिक रुचिकर लगे, उसमें मन लगाकर काम करें, तय है कि आपको सफलता मिलेगी। यह ऋतु छात्रों को कई अवसर देती है। वह अपने आधे अधूरे कार्यों को

आसानी से इस समय निपटा सकते हैं। क्योंकि कार्यों को निपटाने के लिए पर्याप्त समय मिल जाता है। यही वजह है कि ग्रीष्म ऋतु का अवकाश जैसे ही छात्रों को मिलता है, उनके चिहरे खिल और मन मचल जाता है। वह इस अवसर का भरपूर लाभ उठाना चाहते हैं।

छात्र इस मौके पर कई ग्रीष्म-कालीन, विशेष पाठ्यक्रमों और कक्षाओं का लाभ आसानी से अपनी रुचि के अनुसार उठा सकते हैं। वह पर्यटन पर अपने मित्रों, साथियों के साथ तो निकल सकते हैं, इसके अलावा अपने परिवार के साथ भी पर्यटन पर आसानी से जा सकते हैं। पर्यटन से कई तरह का ज्ञान और शिक्षा आसानी से मिल जाती है, जो छात्र के व्यावहारिक जीवन में अत्यंत उपयोगी साबित होती है। यही नहीं यह ऋतु छात्रों के स्वध्याय की भूख भी शांत करने में बहुत हद तक मदद करती है। नई अभिरुचियों का विकास भी करती हैं। खेलकूद एवं योग में निपुणता बढ़ाने का सुअवसर भी आसानी से छात्र-छात्राओं को मिल जाता है, जो उनके को मन को मजबूती और विश्वास प्रदान करने में मदद करता है।

ग्रीष्म ऋतु में यही नहीं छात्रों को गीत-संगीत, नाटक और कथा-कहानियों को भी पढने-सीखने का सुअवसर मिल जाता है, जिससे छात्र के जीवन में विविधता और नवीनता का संचार होता है और जीवन को सुखद तथा आनंदित करता है। इस अवसर पर छात्रों को सामाजिक जीवन के महत्त्व को भी समझने का अवसर मिलता है। वह अपने रिश्ते-नातेदारों के घर जाकर वहाँ सहजीवन का व्यावहारिक ज्ञान आसानी से सीख सकता है। यही नहीं छात्र लोगों से घुलें-मिलें, नईं जानकारियाँ जुटाएँ और संबंधों को मजबूती दें। प्रेम और सहृदयता के बल पर परिवार को जोड़ें, ताकि समाज को मजबूती मिल सके। हम जानते हैं कि अवसर गँवाने से हम बहुत कुछ गँवा देते हैं, जिसे बाद में हासिल करना बहुत कठिन हो जाता है।

ग्रीष्म ऋतु के लंबे अवकाश में छात्रों के ऊपर से पढ़ाई का भार कम हो जाता है। ऐसे में वह कुछ और उपयोगी कार्य करना व सीखना चाहता है। वह भाषण, लेखन, कविता और ऐसे तमाम विधाओं में दक्ष हो सकता है, यदि अपने मिले समय का सही उपयोग करे। यदि किशोर मन अपने कर्तव्य का समुचित रूप से पालन करे और उसकी, सही समय-समय पर समीक्षा और विवेचना होती रहे तो हम उसके अन्दर छिपी प्रतिभा और गुणों का आसानी से विकसित कर सकते हैं। इसके लिए हमें नए सिरे से व्यावहारिक और सरल योजनाओं का निर्माण करना होगा। यह कार्य कोई विशेष संस्था या व्यक्ति के माध्यम से ही सफल होगा ऐसा नहीं है। इसमें छात्र और अध्यापक दोनों को भागीदार बनना पड़ेगा। हम इसे किसी पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाकर मजबूती नहीं दे सकते, बल्कि स्वतंत्र रूप से सहजता-पूर्वक इसे विकसित किया जाए तो छात्र उसका स्वयं हिस्सा बन जाएगा और बिना किसी दबाव के वह उससे और समझ सकेगा। सच पूछा जाए तो ग्रीष्म अवकाश छात्र-छात्राओं के लिए अपनी छिपी प्रतिभा को उजागर करने का सही और उपर्युक्त अवसर देता है।

विवेचना खुले मन से की जाए तो पता चलता है कि बच्चों में प्रतिभा की कोई कमी नहीं है। बच्चे को सही मार्गदर्शन करने की जरूरत है। वह अपने लक्ष्य को आसानी से पा सकते हैं। बस हम लक्ष्य कर लें और कदम बढ़ाएँ तो मंजिल अपने आप मिल जाएगी। नियमित सेटअप लगाए जाएँ, जिससे बच्चों की प्रतिभा में निखार लाया जा सके। हमें अपने सोचने के तरीके बदलने होंगे, जो आपके मन में हैं, वह सवाल संबंधित व्यक्ति से अवश्य पूछे। इससे दोनों का ज्ञान बढ़ेगा। माना जाता है कि अध्यापक को एक अच्छा गुरु बच्चा बनाता है, क्योंकि बच्चे में प्रश्न पूछने की शक्ति है। जैसी परिस्थिति हो, जीवन को उसके अनुकूल जीने की काबलियत होनी चाहिए, जो सीखें, उसे अपने जीवन में निरंतर ढालें, क्योंकि सीखी हुई चीज कभी बेकार नहीं जाती है।

ग्रीष्म ऋतु के अवकाश काल में यदि स्कूलों में समरकैंप आयोजित कर बच्चों को क्राफ्ट, कुकिंग, म्यूजिक, डांस, कैलीग्राफी, वाद्ययंत्र आदि का ज्ञान और शिक्षा दी जाए तो अवकाश का सदुपयोग तो होगा ही बच्चों में रचनात्मकता भी विकसित होगी और उन्हें समय का सदुपयोग भी करना आसान हो जाएगा। यही नहीं वह इसके साथ-साथ ग्रीष्म ऋतु का आसानी से लाभ उठा सकेंगे और उन्हे अवकाश का आनंद भी मिल सकेगा। यदि देखा जाए तो ग्रीष्म ऋतु हमें कष्ट सहने की शक्ति देती है और हमें प्रेरणा मिलती है कि हम अपने अवकाश के समय का कैसे सदुपयोग करें। ❑

(स्वतंत्र लेखक)

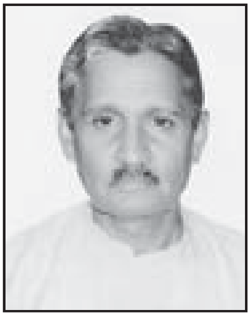

आत्मचिंतन का अवसर-ग्रीष्मावकाश

❑ **बजरंग प्रसाद मजेजी**

बालक अवकाश के दिनों का विभाजन कर समयबद्ध कार्यक्रम बना ले तो उसके लिए लाभप्रद होगा। ग्रीष्मावकाश में बालक को प्रतिदिन 2 घंटे का समय निकालकर अगली कक्षा की तैयारी हेतु पाठ्यपुस्तकें लाकर, सामान्य जानकारी ले लेना चाहिए। अंग्रेजी, गणित, विज्ञान जैसे कठिन विषयों में पूर्व कक्षा की कमजोरी निकालने के लिए पुनरावृत्ति करनी चाहिए मनोरंजन हेतु दूरदर्शन एवं खेल का समय भी अवश्य निर्धारित करना चाहिए, जिससे मित्रों के साथ उसे खेलने-बोलने का अवसर मिल सके। इसके अतिरिक्त बालकों को अपनी दिनचर्या में रुचि के अनुसार चित्रकला, संगीत, पैतृक व्यवसाय में अपने अभिभावक को समय देना चाहिए।

भारत की पर्यावरणीय स्थिति, ऋतु परिवर्तन एवं भौगोलिक कारणों से विभिन्न प्रांतों में विद्यालय के अवकाश का समय अलग-अलग रहता है। देश में भीषण गर्मी के कारण उष्णता बहुल प्रांतों में ग्रीष्मावकाश मई-जून में होते हैं। वार्षिक परीक्षाओं के बाद सभी प्रांतों में एक माह से डेढ़ माह तक का अवकाश रखा जाता है, ताकि बालक को वर्ष पर्यन्त अध्ययन के कारण होने वाली थकान से राहत मिले। शिक्षा मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि बालक एक श्रेणी से अगली श्रेणी में क्रमोन्नत हो तो उसे अगली श्रेणी की तैयारी, पाठ्यक्रम के विषय में सोचने-विचारने का समय दिया जाना चाहिये। उनका यह भी कहना है कि बोझिल पाठ्यक्रम और बस्ते के बोझ से बालक को कुछ समय के लिए विश्राम मिले तो स्वास्थ्य की दृष्टि से भी उचित रहता है। ऐसा होने पर बालक अगली श्रेणी के लिये स्फूर्ति एवं उमंग से तैयार रहता है। बाल मनोवैज्ञानिक राय देते हैं कि बालक को शिक्षा की एक सीढ़ी पर चढ़ने से पूर्व कुछ दिनों का विश्राम दिया जाना चाहिए। उसे अगली कक्षा की तैयारी तथा मन बनाने का अवसर मिलना ही चाहिए। अगली कक्षा की पाठ्यपुस्तकों की जानकारी किये जाने हेतु समय चाहिए। यही नहीं यदि संकाय चुनने का पायदान हो तो बालक को सहपाठियों, अभिभावक से सम्पर्क कर, मन बनाने की अवसर मिलना चाहिए। ग्रीष्मावकाश में बालक को अन्यान्य नगरों में अध्ययनरत साथियों से मिलने, नई जानकारियाँ, भविष्य के चुनाव के लिये निर्णय करने में सहायता करता है। यदि कक्षोन्नति के मध्य बालक को समय न मिले तो उसे उपयुक्त संकाय एवं विषय चुनने का अवसर ही नहीं मिलेगा और उसे अभिभावकों द्वारा सुझाये संकाय को लेना होगा। ऐसे में कभी-कभी बालक निराशाजनक परिणाम देते हैं। इस दृष्टि से भी बालक को वार्षिक परीक्षा के बाद कुछ दिनों का अवकाश मिलना आवश्यक है ताकि वह स्वयं भी आत्म चिन्तन कर, स्वतंत्र रूप से चित्तानुकूल विषय का चुनाव कर सके। बालक को नियमित अध्ययन के अतिरिक्त शारीरिक, मानसिक आवश्यकता के लिए वर्ष भर की भागमभाग दैनन्दिनी से अवकाश की आवश्यकता होती है। जिसकी पूर्ति वह ग्रीष्मावकाश में उसकी रुचि के अनुसार खेल जैसे क्रिकेट, फुटबाल, हॉकी, तैरना, जिम में जाकर शारीरिक व्यायाम, दौड़ का अभ्यास आदि प्रवृत्तियों में भाग लेकर तरोताजा होता है।

अवकाश सदुपयोग हेतु बालकों से अपेक्षा

ग्रीष्मावकाश को बालक सामान्यतः मौज मस्ती करने, देशाटन करने, रिश्तेदारों से मिलने जाने या भरपूर नींद निकालने का अवकाश मानते हैं। बालक इन सब आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अवकाश के दिनों का विभाजन कर समयबद्ध कार्यक्रम बना ले तो उसके लिए लाभप्रद होगा। ग्रीष्मावकाश में बालक को प्रतिदिन 2 घंटे का समय निकालकर अगली कक्षा की तैयारी हेतु पाठ्यपुस्तकें लाकर, सामान्य जानकारी लेनी

चाहिए। अंग्रेजी, गणित, विज्ञान जैसे कठिन विषयों में पूर्व कक्षा की कमजोरी निकालने के लिए पुनरावृत्ति करनी चाहिए तथा परीक्षा में ऐसे प्रश्न जिनका उत्तर वह नहीं दे सका, उनका अध्ययन करना चाहिए ताकि पिछली कक्षा की कमजोरी आगे साथ न चले। ऐसा करने के बाद अगली कक्षा की पाठ्यपुस्तकों में से विशेषकर अंग्रेजी, गणित का पठन-अभ्यास कार्य अवश्य करना चाहिए। मनोरंजन हेतु दूरदर्शन एवं खेल का समय भी अवश्य निर्धारित करना चाहिए, जिससे मित्रों के साथ उसे खेलने-बोलने का अवसर मिल सके। इसके अतिरिक्त बालकों को अपनी दिनचर्या में रुचि के अनुसार चित्रकला, संगीत, पैतृक व्यवसाय में अपने अभिभावक को समय देना चाहिए। ग्रीष्मावकाश में अभिभावक, रिश्तेदार के साथ कुछ दिनों के लिए नये स्थान के लिए सीमित दिवसों की यात्रा करना चाहिये। देशाटन से नवीनज्ञान, जानकारियाँ, रीतिरिवाज, परंपराओं का दर्शन होता है। प्राकृतिक दृश्यों को निहारने का अवसर मिलता है। बालक ग्रीष्मावकाश के उचित लाभप्रद उपयोग हेतु नगर स्थित वाचनालय-पुस्तकालय का लाभ भी ले सकता है। देशभक्त, महापुरुषों, वीरांगनाओं की वीरगाथाओं, धार्मिक कहानियों की पुस्तक से सदाचार जीवनोपयोगी सिद्धान्तों का ज्ञान प्राप्त कर सकता है। बालक को ग्रीष्मावकाश के सदुपयोग के लिये भूगोल, सामान्य ज्ञान की पुस्तकें, प्रांत एवं देश के शासक-प्रशासकों की जानकारी हेतु स्वाध्याय करना चाहिए। सहपाठियों के साथ नये-नये ज्ञान पर चर्चा करने से सीखा हुआ ज्ञान स्थायी रहता है। हिन्दी कवियों की कविताओं, गीत की अन्त्याक्षरी करने से कई दोहे एवं कवितायें कंठस्थ हो सकती है, जिनका उपयोग वह समय-समय पर कर सकता है। ग्रीष्मावकाश को मात्र अवकाश न मानकर नवीनतम ज्ञान प्राप्ति हेतु, आत्म चिंतन एवं अध्ययनगत भूल सुधार का अवकाश मानने पर, अवकाश का उचित सदुपयोग होगा। ❑

(स्वतन्त्र लेखक)

दिल्ली अध्यापक परिषद का प्रदेश कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग सम्पन्न

दिल्ली अध्यापक परिषद का दो दिवसीय अभ्यास वर्ग का उद्घाटन अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के अ.भा. संगठन मंत्री श्री महेंद्र कपूर तथा दिल्ली अध्यापक परिषद् के अध्यक्ष जयभगवान गोयल ने दीप प्रज्वलन से किया। अभ्यास वर्ग 11 से 12 मई 2016 को महाशय चुन्नीलाल विद्यालय, हरिनगर के प्रांगण में सम्पन्न हुआ। आठ सत्रों में चले इस वर्ग में दो सौ अध्यापकों ने सहभाग करते हुए अपने को अद्यतन किया। मुख्यवक्ता श्री महेंद्र कपूर ने अपने उद्बोधन में कहा कि अभ्यास वर्ग से कार्यकर्ताओं में गुणों का प्रकटीकरण व सुदृढ़ीकरण होता है, जिससे राष्ट्र निर्माण व छात्र निर्माण में शिक्षक अपनी भूमिका का निर्वहन कुशलतापूर्वक कर सकता है। परिषद् अध्यक्ष जयभगवान गोयल ने कहा कि हमारा कार्य श्रद्धा, समर्पण,संकल्प व विश्वास के द्वारा फैलता है। हम लोग शिक्षा जगत् का पूर्ण रूप से विचार करते हैं जिसमें राष्ट्र हित, छात्र हित व शिक्षक हित निहित है।

इस अवसर पर महामंत्री रतन लाल ने संगठन का परिचय कराते हुए कहा कि हम लोग सबको साथ लेकर चलते हैं। हमारे पाँच निकाय हैं - राजकीय निकाय, निगम निकाय, अनुदान प्राप्त निकाय, एन.डी.एम.सी. निकाय तथा निजी विद्यालय निकाय। यह दिल्ली का अकेला संगठन है जो पाँचों निकायों में काम कर रहा है। इस वर्ग में अध्यापक बंधुओं ने शिक्षा के अधिकार, सूचना के अधिकार तथा सेवा शर्त संबंधी अनेक जानकारियाँ दी गईं। संगठन मंत्री राजेंद्र गोयल ने कार्यकर्ता के गुणों पर प्रकाश डाला। अभ्यास वर्ग के एक सत्र में वक्ता पाञ्चजन्य के प्रधान संपादक श्री हितेश शंकर ने मीडिया का संगठन के लिए महत्त्व विषय पर शिक्षकों का मार्गदर्शन करते हुए आह्वान किया कि शिक्षक राष्ट्र निर्माण के कार्यों में सदैव तत्पर रहें तथा आधुनिक तकनीक का इस्तेमाल करें। उन्होंने कंप्यूटर संचालन तथा सोशल मीडिया में सक्रिय रहने की सलाह देते हुए ट्विटर हैंडल के गुर भी सिखाये। समापन सत्र में मार्गदर्शन करते हुए रा.स्व.संघ दिल्ली प्रान्त के सह कार्यवाह श्री रोशन लाल ने अपने ओजस्वी वाणी से शिक्षकों में नव ऊर्जा का संचार कर दिया। उनका मानना था कि शिक्षकों को मान-अपमान से ऊपर उठकर काम करना चाहिए तथा धर्म, अधर्म के बीच फर्क को समझना चाहिए। उन्होंने कहा कि मनुष्य के निर्माण करने की प्रवृत्ति केवल भारत में ही है क्योंकि दुनिया में श्रेष्ठतम विचारधारा भारत में ही है। शिक्षकों को take over और over take करने की प्रवृत्ति से बचने की सलाह दी। सत्र संचालन परिषद् के महामंत्री रतन लाल शर्मा ने किया। इस अवसर पर राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के क्षेत्रीय प्रमुख जगदीश कौशिक ने अपने सारगर्भित भाषा शैली में अध्यापकों का मार्गदर्शन किया। प्रशिक्षण प्रकोष्ठ के अध्यक्ष राजेन्द्र सिंह चौहान सभी प्रतिभागियों तथा महाशय चुन्नी लाल विद्यालय के प्रबंधक का धन्यवाद किया।

It is important to note that whatever one opts but common point is character building and making oneself mentally strong enough to face the challenges in the life. Thinking about the Nation, of course reaching after getting through Family, Society etc. Attempts should be focused on developing corruption free society. In these building years if one gets any of talent developed with character building qualities then we can count that to be real success.

Summer Vacation, An Opportunity To Learn More

❑ **Dr. A. K. Gupta**

Vacations especially sum mer vacation are most awaited among all stakeholders for certain reasons. Everybody keeps a plan according to his/ her needs. Generally focus remains on learning or may be in certain cases earning to some extent, may be the motto. For whole of the academic session it's just academics and nothing else which prevails over other things.

Basically person's childhood life can be categorized into different age groups e.g. up to 3 years, then up to 5 years, followed by up to 10 years group, later continuing the same time interval of 5 years it can be divided in 10-15 years, 15-20 years. Physical and mental growth is different for these groups.

The first group of 0-3 years, the infant remains in contact with close family members. There the basic need is to build physically to sustain outer world's initial challenges. One strives for primitive mental development.

In next age group i.e. 3-5 years, the child goes for more mental development then the previous age group. Focus is now turned for sustaining newer challenges and thereby going more for learning about the surrounding environment.

In the age group of 5-10 years, the person goes for learning initial education state. Preference is given to communication and primitive calculation part i.e. learning first language and making small calculations to strive for basic life sustaining skills.

In the next age group i.e. 10-15 years, the person continues to develop his/her skills and learning more during vacations. The time is good for gener-

ating extra skills to make the personality strong enough from morale point of view. One should focus on developing relevant skills e.g. knowing more about our heroes, learning more to help others etc.

The age group 15-20 years is to focus on career building and deciding the stream. There one is bound to focus on deciding the path for his/ her career. Focus on summer thus gets low priority.

The summers are followed by rainy season where everyone prefers to sow for something new to grow. The time is just right to plant a tree and see that it survives. It has come to know that digging a pit before tree sapling is planted is good for growth of the tree. Later it has been seen that tree plantations can fetch a lot on energy consumption, to check environment pollution, good for food etc. As the famous saying goes "Sir Santhe Rukh Rahe To Bhi Sasto Jaan". For sustainability many agitations have become famous e.g. Amrita Devi near Khejadli Village, Chipko Andolan in Himalaya Region etc. Therefore Tree plantation can be given due importance to fight against many evils.

Volunteer teams can be build up to be vigilant to have a watch over nearby region to see that their village gets proper environment e.g. digging up ponds nearby. In urban areas it is just right time to see that space remaing available for ground water recharge allowing rainy water to go inside the ground if pervious / porous medium is provided on the top layer of the pedestrians strips on either side. Tree plantation is also important on the medians on highways. Thus to enhance greenery and also provide protection to vehicle lights coming from opposite side.

Some others may prefer to check dust storms by cleaning post dust storm environment or provide free water services to the passers by. Time should be used to prepare against natural hazards e.g. floods or preparation before season and see that natural water passage is not blocked anywhere in particular in the village area. may it be on roofs, catchment area, drainage or sewer line.

Persons weak in a particular subject may focus to learn in that field e.g. English/ Mathematics or alike. Even Personality Development can be a sort of field to grow and develop self confidence. Writing skills or oratory skills may be developed. One can realise and develop suitable skills in the summer vacations.

In summers temperature rises in the day to maximum making it uncomfortable during the day time to work. So suitable time should be utilised i.e. morning and evening. Even as per the need one may prefer certain field to excel e.g. Sports, Drawing/ Painting, Crafts etc. One can make it of course with the help of organisers to earn a bit.

Another dimension is developing certain skills in one's own personality making it more versatile, known as Kaushal Vikas. Formal training is available for different branches may be traditional e.g. Masonry, Bar Bending, Plumbing, Electrical Household fittings,

Tailoring, Welding, Foot wear design etc. These may be learnt at basic level without much technical input as may be necessary for different trades i.e. Consideration of Earthquake Effects, ductility etc.

Certainly a child can find numerous opportunities in his/her vicinity. He or she can select accordingly. Even one may opt for star gazing or even traditional branch e.g. Astrology/ Palmistry. Others may be swimming, Driving, Adventure Sports- Rock climbing, trekking etc.

It is important to note that whatever one opts but common point is character building and making oneself mentally strong enough to face the challenges in the life. Thinking about the Nation, of course reaching after getting through Family, Society etc. Attempts should be focused on developing corruption free society. In these building years if one gets any of talent developed with character building qualities then we can count that to be real success.

Time remains in plentiful available for tourism activities i.e. visiting different places and learning more local heroes and motivating true stories. Thus summer tourism can be converted in to learning and personality building process. The old stories can be used as motivating factors to do something better for the society.

For teachers and similar communities, it is extra time to learn more with examples in the society utilising in their field. Continuing education programmes e.g. Summer schools etc can be planned for this. Students can focus on their research and similar activities in this environment where one's physical activities remain limited to an enclosure being hard season in view of high temperature and windy atmosphere with limited water available.

There is much more one can think of and plan for. Good learning provides better qualities developed in one's self to strive for adverse conditions, to combat in future as when the need arises. Till then it should be treated as reserve developed which can be used in future. One may feel these qualities as handy at the time when these are badly needed.

The time is just right to make oneness feeling all over the country among persons having different back grounds. Social togetherness can thus be built up by going to maternal place and other similar places and holy places- Please refer "Unjhlo Rajsthan". Visiting different places one can find emotional ties built up leading to National feeling of brotherhood.

Camps etc. can be planned during this period. This is also important for better bond among persons from different backgrounds.

For persons from Law streams and other similar branches one find opportunity to learn more and serve the society more efficiently. The opportunity so made available should be used properly enriching one's own treasure.

In summers everybody plans to visit his/ her own granny's house making self rich by eating more and learning more. "Nani ke ghar jayenge Dodh Malayee Khayenge, ..." So everyone waits for summer vacation commencing. Thus agenda for the vacation is planned in advance. ❑

(Professor, Structural Engineering Department, JNV University, Jodhpur)

Teachers Federation alleges violation of transfer policy

A general meeting of All Jammu, Kashmir and Ladakh Teachers Federation was held under the banner of Akhil Bharatiya Rashtriya Shaikshik Mahasangh, at Udhampur for discussing the issues of teachers and alleged violation of transfer policy. The meet, under the chairmanship of Kartar Chand, State secretary, strongly condemned the recent transfers of Masters/ Lecturers, which are in violations of norms of the transfer policy made by the Government. The teaching fraternity was waiting for the transfer Melas but the school administration is transferring the favourites of politicians / officers on the suitable places in the zero kilometers, the meet said and alleged that the school administration was befooling the teaching community.

“The so called transfer Mela is a flop show. The Federation demands cancellation of all the transfers made in violation of transfer policy. Otherwise we will be forced to hold protest demonstration against the injustice,” the meet warned.

On the occasion, annual membership drive of Shaikshik Mahasangh was also launched and it will continue upto 31 May 2016. During the month long membership, the Federation will cover all the zones of the District Udhampur. All the Teachers /Masters/Lecturers were requested to accept its membership . The ABRSM is working not only for the teaching fraternity but it also working for the betterment of education, society and nation . The ABRSM is the only organization in India which has more than ten lakh members.

The Federation also discussed about the forthcoming two-day Abhiyas Varag, which will held on July 8 & 9, 2016 at Patnitop. It also discussed on the forthcoming one day Conference at Jammu on June 13, 2016.

Times are necessarily to change, that is how time takes us to forward directions. It is we, who are to pace with time. In contemporary times as well as in times to come in future, there should be different mechanisms to impart Bharatiya Sanskriti to the younger ones. There must be devices so formulated, that children shall turn out to be meaningful and cultured citizens on this mighty Nation, Bharat, well in line with the great ancestors. Our generation as well as the previous generations, for more than thousand years, did not get this opportunity of becoming Bharatiya, but let our future generations become.

Some Reflections on Summer Vacation

❑ **Dr. TS Girishkumar**

In younger days, summer vacation used to be a time for simply whiling away(?) for most of the people of older generation. Schools were less, students were less, villages were more serene, and people like me hoped to rush to grandparents, from both sides. Things now are different. From then, to the present, things became all different. More people are school going, there are many schools, and most of the schools are following some kind of international standard to 'catch up' and so on. Students are kept very busy with new kinds of teaching, curricula and learning.

But then, something very serious is missing now. In my younger days, our summer vacation used to get spent at both grandparents places, some hundred kilometres apart. Although we spent most of the time playing, there used to be great deal of time with the grandparents and other elders, who used to narrate stories mainly from the Ramayana and Mahabharata. They were enthusiastic story tellers, and also kept giving many lessons, morals and such things. These indeed were the first foundation stones of Bharatiya Sanskriti in my life. It is from this foundation that I started reading through cartoons first and books subsequently. The interest in Sanskriti initiated was so powerful, before reaching high school itself, stories up to Pancatantra and Kathasaritsagara were already read. In high school, it went to Vishnupurana, Skandapurana and the like.

Grandparents are all of love only, no scolding and shouting. Why do they lovingly insist that we should be with them when they do pujas? Unknowingly, how so many mantras got by hearted! Sanskriti just can't be 'taught' overnight, it is a process through evolution affecting and evolving within the very soul of a person. The grandparents' role here is tremendous. Right from collecting flowers to bel pata, to repeating the mantras in puja, it had been amazingly powerful initiation.

Strong foundations of Bharatiya Sanskriti

It is only after the age of fifty that the realisation slowly comes, upon the significance of the foundations laid by the grandparents. In maturity, there remained no doubts, confusions and apprehensions about Hindu Dharma, Bharatiya Sanskriti and the Nation. The whole thing became so clear, with the help of such powerful upbringing, and these things happened so naturally. With no special programme and efforts from any one, our vacations used to be much more meaningful and instructive, though no one was aware of it.

Three Quotients

People say that there are three Quotients in man. Intelligence Quotient or IQ, emotional Quotient or EQ and Spiritual Quotient or SQ. All the three should be balanced and properly developed to make man near complete. School trainings and academia cater only to the first one, the second and third are left out mostly unattended. Academic training, text books, teaching, examination and all are directed towards providing 'information', assimilating them to some extent and remembering them for reproduction at examinations. Albeit it had been told by Maharishi Akshapada Gautama in BC third century itself that 'knowledge worth the name must have the property of affectivity' that is affecting the knower, which imply purifying the knower through a process of refining to make a Sanskari out of the knower, the current curricula is blissfully ignorant of such ancestry.

Hence what goes on in teaching arena is largely training of the intellect and assimilation of information (Gautma would not call it knowledge). The intellect is trained, intellect alone is stuffed with information and we create Frankenstein like characters. It thus becomes natural for academia to produce characters like those we see in places like JNU, who has both untrained emotions and spirituality. Man is not only a 'rational' being, he is also an 'emotional' being with transcendental longing and hence 'spiritual'. We have many examples as results of this one sided training everywhere; people turn into personalities with shattered emotions and untrained spirituality.

Meaningful vacation

The thing in discussion is how to make vacations meaningful. Perhaps we ought to concentrate on the area those are not covered in routine academics to make vacations purposeful. Learning some new skills are one thing to think of. Engaging in sports for youngsters with such orientation could be another. But with villages becoming rather extinct, grandparents turning modern, where can one get some emotional and spiritual intelligence? How would we go about making a balance between the three? An example from Plato could be instructive.

Utopia and Plato

We are well aware of Plato and his Republic. But many of us are not very conscious of Plato borrowing the Vedic Varnashrama Dharma to pattern his Utopia. For Plato, soul has three parts. Top most part is Reason, middle part is Spirit and bottom most part is Appetite. The developments of these three parts are not uniform, in some individuals some part is dominant and other parts are dormant and this varies. In some people the reason part is dominant and other two parts are dormant. In some others the spirit (courage) is dominant and other two are dormant. In some the appetite is dominant and other two are dormant. And in some, all the three parts are equally dormant. Interestingly, Plato does not speak of a situation where in some; all three parts are equally dominant!

Based on his theory of soul, Plato creates his Utopia, an 'ideal' state of politics. He says that people with the upper, rational part of soul dominant are the Philosophers and they should be the rulers, Kings. People with the middle, Spirit or courage part dominant should be the soldiers. Those with Appetite developed should be the farmers, traders and the like. And finally, in those whom all the three parts are dormant, they can only be helpers to others, and therefore they are the slaves.

Now if one sees Plato in the light of Vedic Varnashrama Dharma, one can see that the four

Varna, Brahmana, Kshatriya, Vaisya and Sudra simply fitting into this description of ideal society of Plato. Some heavy borrowing is done here. It used to be the case often, especially with the Greek Hellenism in Greece and Universities like Takshasila in Bharat. We can also see similar phenomenon with Plato's theory of 'Ideas' as well. The point I wish to bring out is simple, depending on the attitude and interest of students, the vacations should contain such programme to develop unattended and hidden skills.

Balanced human existence

Apart from developing given skills for given individuals, there should be an overall programme of creating a balanced mind unlike Plato who believed that the three parts of soul are developed differently. The ideal situation to aspire shall be a situation where all the Quotients are developed to some equation. One of the problems we have in our present society is absence of emotional intelligence and absence of spiritual intelligence.

This becomes all the more important given the context of Bharat, a Nation which is united and remains united through Sanskriti and Parampara, a Sanskriti and Parampara which is an offshoot of the Vedopanishadic knowledge tradition. Other nations use their mother tongues, religion and at times geographical specialities to say that they are together. Bharat is the only nation that is united through a 'knowledge tradition' a Sanskriti resulting from it and Dharma.

These things are not conspicuous like language, religion or geographical identities. These things are apparently latent though very powerful, but they are not 'visible' as other things are, they are not easily adopted just by 'seeing' or hearing as compared to identities of other societies. One may say that they are 'implied' in deep within.

The power and strength of Bharatiya Sanskriti is something that has to be felt and internalised, something only through which an archetype Bharatiya ought to live. Older generations used to get these rather spontaneously on a routine; through ancestry and the village as well as farming culture. This no longer is the case anymore, and teaching and learning is no longer done in village temples by a Pundit. Times have changed, things have changed.

Changing times and our pacing with

Times are necessarily to change, that is how time takes us to forward directions. It is we, who are to pace with time. In contemporary time as well as in time to come, there should be different mechanisms to impart Bharatiya Sanskriti to the younger ones. There must be devices so formulated, that children shall turn out to be meaningful and cultured citizens on this mighty Nation, Bharat, well in line with the great ancestors. Our generation as well as the previous generations, for more than thousand years, did not get this opportunity of becoming Bharatiya, but let our future generations become.

We do not want destructive and divisive theories to pattern and formulate the thinking processes of our future generation as seen in places like JNU. These people shall only look at things from either Europe or America as authorities. They are patterned in negativism, and shall only find fault in everything: utter Dohsaikadrikatva. Therefore, we must do few things, very seriously few things.

Let us, therefore, begin with the assumed free time of summer vacation. Can we not create curricula to fit in this need? Can we not get meaningful Acharyas, teachers to execute this task? Can we not get the young ones to sit and listen to what gets imparted?

Indeed we can. We can, because, they are our children. They should be more hungry to know these things than what we can conceive of. They know that there is something like Sanskriti, they do not know anything about it, but they desperately want to know. I personally experienced such tremendous longing in students to hear, and know 'their' own Sanskriti. The only thing is that, it must be possible for us to perform this task.

Let us use these regular vacations for the sake of our great nation, to let the next generation understand and realise what we are, what we used to be, and how our ancestors struggled to maintain what we really are. Let us make our children aware and conscious that they are the descendants of a mighty knowledge tradition, mighty culture and are indeed Viswa Gurus. Our bad times are gone, now it is real time for us to surge ahead and ahead into greatness. ❑

(Professor of Philosophy, The Maharaja Sayajirao University of Baroda)

HRD ministry plans Vedic education board on lines of CBSE

❑ **Ritika Chopra**

The NDA-II government has quietly scripted plans for setting up its own school board for 'Ved Vidya' (vedic education), even as it rejected a similar proposal moved by yoga guru Ramdev recently.

It has been learnt that the HRD ministry plans to establish an examination board under the aegis of Maharshi Sandipani Rashtriya Veda Vidya Pratishthan (MSRVVP) in Ujjain, an autonomous organisation working on encouraging and preserving 'Ved Vidya'. A five-member government panel headed by MSRVVP Secretary Devi Prasad Tripathi has suggested an initial fund of Rs 6 crore to set up this board.

Sources said the decision to start a Vedic education board, on the lines of CBSE, is based on the recommendation of Sanskrit experts and representatives of gurukuls and ved pathshalas, who met under the chairmanship of Swami Govindadeva Giri in Bengaluru on January 17. Chamu Krishna Shastry, advisor (languages) to HRD Minister Smriti Irani, also attended this meeting.

Ramdev bid to set up Vedic board hits a hurdle PMO acts on Ramdev proposal, holds meet on Vedic Education Board. HRD Ministry developing aptitude test for school students. Panel suggests national school board for Sanskrit, vedic studies. Param Vir Chakra awardees to feature in NCERT book.

Smriti Irani launches 'Swachh Bharat Swachh Vidyalaya' campaign. MSRVVP in Ujjain was set up in 1987 to develop and propagate oral studies of the Vedas. It currently affiliates 450 institutions of traditional learning like pathshalas and guru-shisya parampara yojana across the country. Although this organisation has been conducting Class X and XII examinations, its certificates are not considered equivalent to mainstream levels of education by several institutions. Upgrading MSRVVP to a formal examination body, the government feels, will address the problem of recognising traditional learning.

Smriti Irani launches 'Swachh Bharat Swachh Vidyalaya' campaign. MSRVVP in Ujjain was set up in 1987 to develop and propagate oral studies of the Vedas. It currently affiliates 450 institutions of traditional learning like pathshalas and guru-shisya parampara yojana across the country. Although this organisation has been conducting Class X and XII examinations, its certificates are not considered equivalent to mainstream levels of education by several institutions. Upgrading MSRVVP to a formal examination body, the government feels, will address the problem of recognising traditional learning.

According to experts who attended the January meeting, there are about 10,000 'Ved Vidya' students at present. After the board is formed, the government estimates that another 40,000 students will join the fray.

Sources said apart from supporting traditional pathshalas, the proposed board will also be assigned the responsibility of evolving new kinds of schools — those with vedas and Sanskrit as major subjects and modern subjects as minor; modern subjects as major subjects and Vedas as minor; schools which teach general education in Sanskrit; evening Vedas and Sanskrit schools.

Once set up, this will be the country's first Vedic education board.

As first reported by The Indian Express on March 22, Ramdev had proposed a similar plan to start a Vedic education board. However, the HRD ministry is learnt to have red-flagged the proposal at a meeting chaired by Prime Minister Narendra Modi on April 13, on the ground that sanction for a private board would open the doors for similar requests from other unrecognised school boards. No private board is currently recognised by the Centre.

Speaking to The Indian Express on May 17, Irani had acknowledged that the government was looking at ways to formalise Vedic education but didn't elaborate further.

"We are in the process of looking at some aspects containing vedic education and challenges which are attached to it, because this sector not only has no proper structure but also a lot of our wealth in vedic education is silently getting lost. Since it is in a process of consultation right now, it would be inappropriate to talk about it publicly," she had said. ❑

AkhiI Bhartiya Rashtriya Shaikshik Mahasangh (ABRSM)

Suggestions Regarding Amendments by UGC

The Higher Education Wing of the ABRSM has taken a serious view of the form of amendments carried out in UGC Regulation 2010. It unequivocally demands immediate suspension of the notification regarding amendments and discussion on this specific issue between UGC and ABRSM be initiated. The amendments are irrational and will play havoc with the situation of higher education in the country In this regard, we submit the following:

1. The amendments carried out in Section 3 and 4 and Appendix Ill relating to API / PBAS system is in contravention of Section 15 of the UGC Regulation 2010.
2. Any Ph.D degree awarded by a recognized university / Institution in accordance with the then prevailing norms be considered at par with the Ph.D as per the Ph.D Regulation 2009 without any condition.
3. The second amendment to the UGC Regulation 2010 related to API Capping be withdrawn with effect from notification date 13th June 2013.
4. The third amendment to the UGC Regulation 2010 in the form of workload for university and college teachers at the cost of research and co-curricular activities is in contravention of Section 15 of the UGC Regulation 2010. The ABRSM (Higher Education Wing) demands restoration of 12/14/16 hours per week workload respectively for Professors / Associate Professors / Assistant Professors without modifying number of hours for practical / tutorials/ preceptorials.
5. The students' feedback of teachers as proposed in the third amendment notification needs to be reconsidered in its entirety.
6. The filling of all vacant positions through regular appointments in place of ad-hoc / temporary / part time / contractual teachers be expedited as soon as possible in a time bound manner.
7. The ABRSM (Higher Education Wing) demands UGC to resolve all anomalies arisen out of implementation of sixth pay recommendations.
8. The five year tenure appointment of Principals is irrational and the ABRSM (Higher Education Wing) reiterates its demand to reconsider this matter seriously.

उच्च शिक्षा की चिन्तायें

❑ **डॉ. ओम प्रभात अग्रवाल**

शैक्षणिक स्टॉफ की नियुक्तियाँ पूरी तरह स्वच्छ और पारदर्शी प्रक्रिया द्वारा होनी चाहिये। इनमें किसी प्रकार का राजनैतिक अथवा अन्य प्रकार का दबाव (जान पहचान, जाति अथवा क्षेत्र भावना) संस्थान के भविष्य के साथ खिलवाड़ करना ही कहा जायेगा। दु:ख की बात है कि वर्तमान में यह बात आम हो चुकी है और यही गिरते स्तर का मूल कारण है। गिरावट का एक अन्य कारण है सीमित सी जाँच पड़ताल के आधार पर प्रोफेसर के उच्चतम पद तक निरंतर स्वत: पदोन्नति (automatic promotion)।यह व्यवस्था निश्चित रूप से औसत कार्य संस्कृति (mediocrity)को प्रोत्साहित करने वाली है।

आज देश में उच्चतर शिक्षा के क्षेत्र में भारी गिरावट है और यह गंभीर चिंता का विषय है। चीन के शंघाई विश्वविद्यालय द्वारा वर्ष 2015 में प्रकाशित विश्व के 500 सर्वोत्कृष्ट उच्चतर शिक्षा संस्थानों की सूची में केवल एक भारतीय नाम है, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस, बेंगलुरु, और वह भी 301–400 के खंड में। वर्ष 2012 में न्यूयार्क टाइम्स में अमरीका के क्यू.एस. विश्वविद्यालय द्वारा निकाली गई ऐसी ही एक अन्य सूची में भी 500 में बमुश्किल आधा दर्जन भारतीय संस्थान हैं (वह भी 200 के नीचे) और उनमें भी विश्वविद्यालय तो एक भी नहीं है। ऐसे किसी भी आकलन के लिये संस्थान के पूर्व विद्यार्थियों, प्रोफेसरों आदि में नोबेल पुरस्कार विजेताओं की संख्या, अति प्रतिष्ठित अकादमिक सोसायटियों (जैसे इंग्लैंड की रॉयल सोसायटी) द्वारा उन्हें प्रदान की गई मानद फैलो सदस्यता की संख्या, वैश्विक स्तर के जर्नलों (जैसे नेचर, साइंस आदि) में प्रोफेसरों द्वारा प्रकाशित शोध पत्रों की संख्या एवं ऐसे ही जर्नलों में तत्पश्चात् प्रकाशित अन्य शोध पत्रों में उनके उल्लेख (साइटेशन) आदि अत्युच्च स्तर के मानकों को आधार बनाया जाता है। इन मानकों पर कसे जाने पर भारतीय संस्थानों की दशा दयनीय ही ठहरती है।

किसी भी देश के उच्चतर शिक्षण संस्थान उसकी भावी प्रगति, निरंतर बढ़ती क्षमता और अंतर्राष्ट्रीय छवि में उत्तरोत्तर सुधार के लिये आधारभूत होते हैं। वे केवल डिग्रियाँ देने का कार्य नहीं करते बल्कि समाज को वैचारिक और सांस्कृतिक नेतृत्व भी प्रदान करते हैं। इसीलिये भारत में इनमें आ रही गिरावट के कारणों और संभावित समाधानों पर एक दृष्टि डाल लेना अत्यावश्यक है।

प्राथमिक बात तो यही है कि जिन संस्थानों का उत्तरदायित्व इतना गहन हो, उनकी संख्या सीमित ही होनी चाहिये। बरसाती मेढकों की भाँति बढ़ती संख्या स्तरहीनता को ही प्रोत्साहित करती है। कुछ वर्ष पूर्व के काल से प्रारंभ हुई प्राइवेट इंजीनियरिंग एवं मेडिकल कॉलेजों की बाढ़ इसे सत्य सिद्ध करने के लिये यथेष्ट है। प्रत्येक राज्य में अधिक से अधिक ऐसे सरकारी अथवा स्वायत्तशासी (autonomous) संस्थानों को खोलने की राजनैतिक होड़ में भी ऊपर बताई गई भूमिका अर्थहीन होती जा रही है। अभी नवंबर 2015 में इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (IGNOU) के स्थापना दिवस पर बोलते हुये हिंदू विश्वविद्यालय वाराणसी के कुलपति गिरीश चंद्र त्रिपाठी ने भी इस प्रवृत्ति पर चिंता प्रकट की

थी। उन्होंने कहा कि बहु तकनीकी शिक्षण संस्थानों की भांति केन्द्रीय विश्वविद्यालय खोलते चले जाना किसी भी प्रकार से उपयोगी और लाभप्रद नहीं हो सकता। वस्तुत: समझ में ही नहीं आता कि नितांत अविकसित अंचल जैसे महेन्द्रगढ़ (हरियाणा) में केन्द्रीय विश्वविद्यालय का खुलना किस प्रकार देश की प्रगति को सार्थक पहल दे सकता है। जहाँ तक प्रश्न है भारत की विशाल जनसंख्या में उच्चतर डिग्री के आकाँक्षार्थियों की तो उनके लिये इंदिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय की कोटि के संस्थानों को स्थापित कर उद्देश्य की प्राप्ति की जा सकती है। ऐसे में आवासीय संस्थानों के स्तर एवं उनकी छवि अक्षुण्ण बनी रह सकेगी?

दूसरी चिंतनीय बात है कुलपतियों, निदेशकों आदि की नियुक्ति जो अधिकांशत: राजनीतिज्ञों के हाथ की अवसरवादी बाजीगरी मात्र बन कर रह जाती है। इन पदों पर तो ऐसे ज्ञानवान व्यक्तियों को बैठाना ही श्रेयस्कर हो सकता है जो संस्थान को उच्चतम कोटि का बौद्धिक नेतृत्व देने की क्षमता रखते हो एवं वहाँ के आचार्यों तथा शिक्षार्थियों को अनुसंधान की लौ सतत जाग्रत रखने की प्रेरणा दे सकते हो। इस कसौटी पर खरा न उतरने वाले व्यक्ति कैम्पस में केवल चमचागिरी जैसी प्रवृत्तियों को ही बढ़ावा देते हैं। वे स्वयं भी अपने उपकारक और संरक्षक को प्रसन्न रखने के लिये मेरिट को नजरअंदाज कर शैक्षणिक स्टाफ आदि को नियुक्त करने के लिये जोड़ तोड़ करते रहते हैं तथा इस प्रकार संस्थान को निरंतर पतन के गर्त में धकेलते जाते हैं। आश्चर्य की बात तो यह है कि कम से कम कुलपतियों की नियुक्ति के लिये पेनल की संस्तुति करने वाली समिति में तो विश्वविद्यालय अनुदान आयोग का प्रतिनिधि भी होता है और तब भी बहुधा स्तरहीन व्यक्ति पद पर आसीन होने में सफल हो जाते हैं। इस दृष्टि से अब समस्या का एक ही समाधान समझ में आता है कि राष्ट्रीय स्तर पर ही नियामक एजेंसियाँ (विश्वविद्यालय आयोग आदि) योग्य व्यक्तियों की एक सूची तैयार करें और राज्य सरकारों को अधिकार हो कि उनमें से किसी को भी चुन लें।

तकनीकी कॉलेजों के प्रबंधन में तो खामियाँ ही खामियाँ दिखाई पड़ती हैं। अभी कुछ ही समय पूर्व एक संसदीय समिति ने माना कि मेडिकल शिक्षा की नियामक संस्था ''मेडिकल काउंसिल ऑफ इंडिया -MCI'' कालेजों में शिक्षा का अच्छा स्तर बनाये रखने में बुरी तरह असफल रही है। बल्कि इसने तो नये कालेजों को अपनी सहमति के अधिकार का दुरुपयोग करते हुये भ्रष्टाचार को भी बढ़ावा दिया है। हालात ये हैं कि निजी कॉलेज झूठी (Ghost) फैकल्टी और infrastructure तक दिखाने में परहेज नहीं करते और MCI आँख मूँद कर उनकी बातें मान लेती है। यह सब देश के स्वास्थ्य के साथ भयानक खिलवाड़ है। स्वागत योग्य है कि अब भारत सरकार ने इससे निपटने के लिये कठोर कदम उठाने का निश्चय कर लिया है। संभवत: MCI में सदस्यों की नियुक्ति चुनाव द्वारा न होकर भविष्य में नामांकन द्वारा की जायेगी और उसमें सामाजिक कार्यकर्ताओं, पैरामेडिकल स्टाफ के प्रतिनिधियों आदि को भी सम्मिलित किया जायेगा। इनसे एक सक्षम MCI का गठन हो सकेगा। उच्चतम न्यायालय ने अभी-अभी सरकारी एवं निजी, सभी प्रकार के मेडिकल कॉलेजों के लिये साझा प्रवेश परीक्षा की अनुमति दे कर भी उज्जवल भविष्य का मार्ग प्रशस्त किया है। कहना न होगा कि इंजीनियरिंग शिक्षा में भी कुछ इसी प्रकार के दूरगामी सुधारों की आवश्यकता अभी भी बची हुई है। ज्ञातव्य है कि अभी कुछ समय पूर्व प्रकाशित हुई Aspiring Minds : National Employability Report के अनुसार प्रतिवर्ष निकलने वाले लगभग चार लाख इंजीनियरिंग स्नातकों में से 80 प्रतिशत अपनी जिम्मेदारी के निर्वाह के लिए अयोग्य सिद्ध होते हैं। इसी प्रकार एसोचेम एजुकेशन कमेटी की नवीनतम रपट के अनुसार शीर्ष के कुछ एक व्यापार प्रबन्धन कॉलेजों को यदि छोड़ दें तो शेष लगभग 5000 कॉलेजों के स्नातकों में से मात्र सात प्रतिशत ही अपनी योग्यता सिद्ध कर पाते हैं। कानून की शिक्षा पर भी ध्यान देना आवश्यक है। अक्टूबर 2015 में भारतीय अधिवक्ता परिषद के अध्यक्ष मन्नन कुमार मिश्र ने माना है कि देश में लगभग 30 प्रतिशत वकीलों की डिग्री जाली है। इससे कैसे निपटा जाये इस पर निश्चित रूप से गहन चिंतन की आवश्यकता है।

विश्वविद्यालयों एवं मेडिकल कॉलेजों आदि में शोध के लिये फंड का दयनीय अभाव है। इन संस्थानों की कुकुरमुत्तों की भाँति बढ़ती संख्या इसे और भी शोचनीय बना रही है। पुन: स्मरणीय है कि इन संस्थानों का शोध के प्रति अनिवार्य दायित्व होता है और वही इनके गुणात्मक स्तर को निर्धारित करता है। अत: इनके लिये फंड की व्यवस्था करनी ही होगी क्योंकि वह देश की प्रगति के लिये भी आवश्यक है। इसके लिये निजी उद्योगों को भी भागीदारी के लिये प्रेरित करना होगा। जनवरी 2016 में इसी समस्या को इंगित करते हुये इंडियन काउंसिल ऑफ मेडिकल रिसर्च प्रमुख ने कहा था कि 2012-17 के पंचवर्षीय खंड के लिये निर्धारित (मेडिकल शोध के लिये) दस हजार करोड़ का अभी तक केवल आधा ही उपलब्ध कराया गया है जिसके कारण 32 संस्थानों में महत्त्वपूर्ण शोध कार्यक्रम लंबित पड़े हैं। कहना न होगा कि विश्वविद्यालयों की दशा तो और भी खराब है।

विश्वविद्यालयों में विभागों में (और कुछ एक तकनीकी संस्थानों में भी) अध्यक्ष पद के लिये चक्रानुक्रमिक परिवर्तन (rotation) व्यवस्था ने शैक्षणिक स्टाफ में

अनुशासन को तबाह कर रख दिया है। वरिष्ठों के प्रति अवहेलना का भाव बहुत स्पष्ट दिखता है। सभी को लगता है कि एक वरिष्ठ व्यक्ति मात्र तीन वर्षों तक अध्यक्ष रहकर ही उन्हें निर्देशित कर सकता है और इसीलिये उसको अधिक महत्व देना निरर्थक है। ऐसा विभागाध्यक्ष भी अपनी कमजोर स्थित का अहसास करते हुये पूरे अधिकार के साथ विभाग पर नियंत्रण नहीं रख पाता। विभागों को शिक्षण और शोध में स्पष्ट दिशा में सतत् प्रेरित करने के लिये स्थायी अध्यक्षों की तुरंत आवश्यकता है। प्रस्तावित व्यवस्था में स्थायी अध्यक्ष द्वारा तानाशाही निर्णय लिये जाने का भय बना रहता है। परंतु इन प्रवृत्तियों पर अंकुश लगाने में विभागीय समितियाँ (जो वर्तमान में भी कार्य कर रही हैं) सार्थक भूमिका का निर्वाह अवश्य ही करेंगी। ज्ञातव्य है कि 70 और 80 के दशकों में स्वयं लेखक इस प्रकार के अध्यक्षता परिवर्तन का न केवल हामी रहा था बल्कि उसने इसे प्रारंभ करवाने के लिये अथक प्रयास भी किया था। परंतु अनुभव ने इस व्यवस्था की कमियाँ पूरी तरह उजागर कर दी हैं।

यह तो निर्विवाद ही है कि शैक्षणिक स्टॉफ की नियुक्तियाँ पूरी तरह स्वच्छ और पारदर्शी प्रक्रिया द्वारा होनी चाहिये। इनमें किसी प्रकार का राजनैतिक अथवा अन्य प्रकार का दबाव (जान पहचान, जाति अथवा क्षेत्र भावना) संस्थान के भविष्य के साथ खिलवाड़ करना ही कहा जायेगा। दु:ख की बात है कि वर्तमान में यह बात आम हो चुकी है और यही गिरते स्तर का मूल कारण है। गिरावट का एक अन्य कारण है सीमित सी जाँच पड़ताल के आधार पर प्रोफेसर के उच्चतम पद तक निरंतर स्वत: पदोन्नति (automatic promotion)। यह व्यवस्था निश्चित रूप से औसत कार्य संस्कृति (mediocrity) को प्रोत्साहित करने वाली है। वस्तुत: प्रोफेसर के पद पर नियुक्ति के आकाँक्षी व्यक्ति की योग्यताओं और अकादमिक उपलब्धियों की गहनतम जाँच के पश्चात् ही होनी चाहिये क्योंकि ये ही लोग संस्थान की चरम प्रगति के लिये सर्वाधिक उत्तरदायी होते हैं।

एक बात और है जो अत्यधिक विवादास्पद हो सकती है यद्यपि लेखक के मतानुसार उच्चतर शिक्षा और राष्ट्र की संबंधित प्रगति के लिये अत्यावश्यक है। विश्वविद्यालयों में स्नातक कक्षाओं तक तो प्रवेश में आरक्षण दिये जाने को वर्तमान परिस्थितियों में देश की इतिहासजन्य सामाजिक विकृतियों को दृष्टि में रखते हुये आपत्तिजनक न माना जाय परंतु उच्चतर डिग्रियों तथा तकनीकी संस्थानों के लिये प्रवेश पूर्ण रूप से योग्यता (मेरिट) आधारित ही बनाना होगा। कहा जा सकता है कि इस कदम से निचले स्तर पर आरक्षण का लाभ लेने वालों पर उत्कृष्ट अकादमिक प्रदर्शन के लिये दबाव भी बनेगा जो अंतत: संस्थान और राष्ट्र के लिये हितकर सिद्ध होगा।

अंतिम बात माध्यम के रूप में भाषा के चुनाव की स्वतंत्रता से है। हम कब तक अंग्रेजी से चिपके रहेंगे? क्या हम देख नहीं पा रहे कि हमारी भाषा नीति प्रतिवर्ष हजारों विद्यार्थियों का भविष्य अंधकारमय बना देती है। उनमें योग्यता, अध्ययन क्षमता, प्रतिभा, सभी कुछ भरपूर हो सकता है परंतु वे प्रवेश पाने और अपना तथा संस्थान का भविष्य उज्ज्वल बनाने में उचित भूमिका का निर्वाह नहीं कर पाते। आँकड़े कहते हैं कि संघ लोक सेवा आयोग की परिवर्तित भाषा नीति के कारण वर्ष 2011-2014 के काल में क्षेत्रीय भाषा को माध्यम रूप में अपनाने वाले 60 प्रतिशत लोग धड़ाम हो गये। अब हमें अंग्रेजी का मोह त्याग कर उच्चतर शिक्षा के क्षेत्र में भारतीय भाषाओं को उनका न्यायोचित स्थान दिलाने की दिशा में आगे बढ़ना ही पड़ेगा। परंतु दु:ख की बात है कि भारत सरकार ने आगामी वर्षों के शिक्षा बजट में जिस कटौती का मन बनाया है उसका सीधा असर उच्चतर शिक्षा क्षेत्र में भारतीय भाषाओं के अनुप्रयोग को बढ़ावा देने के कार्यक्रम पर पड़ने वाला है।

उच्चतर शिक्षा किसी भी देश की प्रगति के लिये उसके शरीर में शुद्ध रक्त के प्रवाह की भांति होती है। इसके संबंध में बिना गंभीरतम चिंतन के नीतियों का निर्धारण अक्षम्य है। स्मरणीय है कि विज्ञान, समाज-विज्ञान, अर्थशास्त्र, इतिहास, दर्शन आदि सभी में प्रकांड पांडित्य का जनक यही क्षेत्र रहा है और यह भी निर्विवादित सत्य है कि यह पांडित्य ही देश की प्रगति का सुदृढ़तम शिलाधार होता है। ❑

(पूर्व सदस्य - केंद्रीय हिन्दी समिति,भारत सरकार)

देशीय अध्यापक परिषद्, केरल का प्रदेश अभ्यास वर्ग सम्पन्न

वयनाड जिले के सुलतान बत्तेरी में देशीय अध्यापक परिषद के कार्यकर्ताओं का दो दिवसीय अभ्यास वर्ग सम्पन्न हुआ। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रांत प्रचारक गोपालन कुट्टी मास्टर ने अभ्यास वर्ग का उद्घाटन किया। देशीय अध्यापक परिषद् के राज्य अध्यक्ष टी.ए. नारायणन मास्टर अध्यक्ष थे। किसान मोर्चा के अखिल भारतीय सचिव पी सी मोहन मुख्य अतिथि थे। उद्घाटन समारोह में देशीय अध्यापक परिषद के राज्य सचिव पी.एस. गोप कुमार ने स्वागत भाषण दिया।

विभिन्न सत्रों में अशोकन इलेवनी ने सेवा मामलों के बारे में, प्रो. डॉ. सी.एन. बालकृष्णन नंबियार ने नेतृत्व की गुणवत्ता आदि विषयों के बारे में बहुत बढिया ढंग से जानकारियाँ दी। समापन सत्र में देशीय अध्यापक परिषद् के संस्थापक अध्यक्ष के.एम. बालकृष्णन मास्टर का सम्मान किया गया। नौ जिलों के 56 प्रतिनिधियों ने अभ्यास वर्ग में सहभाग किया।

सपनों से परे

❑ मनोज कुमार

एक अबोध मन की कल्पना इस दुनिया की सबसे सुंदर रचना होती है। कभी किसी छोटे-से बच्चे को निहारिये। वह सबसे बेखबर अपनी ही दुनिया में खोया होता है। जाने वह क्या देखता है! अनायास कभी वह मुस्करा देता है तो कभी भयभीत हो जाता है। कभी खुद से बात करने की कोशिश करता है तो कभी वह सोच की मुद्रा में पड़ जाता है। तब उसे यह नहीं पता होता कि हाथी किस तरह का होता है या शेर कभी हमला भी कर सकता है! चिड़िया की चहचाहट उनका मन मोह लेती है तो बंदर की उछल-कूद उसके लिए एक खेल होता है। सच से परे वह अपनी दुनिया खुद बुनता है। शायद इसीलिए हमारे समाज में बच्चों के खेल-खिलौनों का आविष्कार हुआ। बंदर से लेकर चिड़िया और गुड्डे-गुड़िया या घर-गृहस्थी के सामान बच्चों के खेल में शामिल होते थे। नन्हें बच्चे का आहिस्ता-आहिस्ता दुनिया से परिचय होता था।

एक वह समय था जब माँ-बाप के पास भी वक्त होता था। वे अपने बच्चों को बढ़ते देख कर प्रसन्न होते थे। यह वही समय होता था जब माँ लोरी सुना कर और बच्चों को थपथपा कर स्नेहपूर्वक नींद के आगोश में भेजती थी। शायद इसी समय से शुरू होता था माँ का स्कूल। इस स्कूल में माँ का स्नेह तो था ही, जीवन का सबक भी बच्चा यहीं से सीखता था। यानी बड़ों का सम्मान करना और छोटों से प्यार। यह वही समय था वह पर्व-त्योहारों को मनाये जाते देख कर उनके भावों को अपने दिमाग में उतारता था। वह रंगों का मतलब जानता था। पतंग की डोर से वह जीत की सीख लेता था। लेकिन इस जीत की सीख में उसके पास संवेदनाएँ भी थीं। वह जीतना चाहता था, लेकिन किसी की पराजय उसका लक्ष्य नहीं था।

विडंबना यह है कि स्वप्न-लोक में बच्चों के विचरने के दिन अब गुम हो गए हैं। अब न वह समय बचा और न सपने। अब बच्चे वयस्क दिख रहे हैं। माँ-बाप के पास वक्त नहीं है। अब उन्हें कोई नहीं सिखाता है कि 'ह' से हाथी और ग से गमला होता है। वे यह जानते हैं कि 'एलीफैंट' किसे कहते हैं। 'बंदर मामा' की कहानी उसे पता नहीं है, लेकिन 'मंकी' से वह बाखबर है। दिवाली पर फूटने वाले पटाखों को वह पर्यावरण दूषित

विडंबना यह है कि स्वप्न-लोक में बच्चों के विचरने के दिन अब गुम हो गए हैं। अब न वह समय बचा और न सपने। अब बच्चे वयस्क दिख रहे हैं। माँ-बाप के पास वक्त नहीं है। अब उन्हें कोई नहीं सिखाता है कि 'ह' से हाथी और ग से गमला होता है। वे यह जानते हैं कि 'एलीफैंट' किसे कहते हैं। 'बंदर मामा' की कहानी उसे पता नहीं है, लेकिन 'मंकी' से वह बाखबर है। दिवाली पर फूटने वाले पटाखों को वह पर्यावरण दूषित करना कहता है, लेकिन एके-47 जैसे घातक हथियारों के मोहपाश में बंधा हुआ, बंदूक उसे जीवन-रक्षक लगती है। बच्चे का दिमाग टेलीविजन के परदे पर उतरने वाले रंगों की तरह रंगा हुआ है, लेकिन होली के रंगों से उसे एलर्जी है। आज का बच्चा 'इंटेलीजेंट' है। वह 'आइपैड' से खेलता है और कॉमिक वाले धारावाहिक देखता है। उसे अब सपने नहीं आते। वह 'एनीमेटेड' चरित्रों को देख कर उन्हें ही जीने लगता है। इन चरित्रों में भी जिसे 'विलेन' या खलनायक कहा जाता है, वही उसका प्रिय पात्र होता है।

करना कहता है, लेकिन एके-47 जैसे घातक हथियारों के मोहपाश में बंधा हुआ, बंदूक उसे जीवन-रक्षक लगती है। बच्चे का दिमाग टेलीविजन के परदे पर उतरने वाले रंगों की तरह रंगा हुआ है, लेकिन होली के रंगों से उसे एलर्जी है। आज का बच्चा 'इंटेलीजेंट' है। वह 'आइपैड' से खेलता है और कॉमिक वाले धारावाहिक देखता है। उसे अब सपने नहीं आते। वह 'एनीमेटेड' चरित्रों को देख कर उन्हें ही जीने लगता है। इन चरित्रों में भी जिसे 'विलेन' या खलनायक कहा जाता है, वही उसका प्रिय पात्र होता है। आज का बच्चा जल्दी में है। वह थोड़े समय में सब कुछ पा लेना चाहता है। जीत जाना उसका एकमात्र ध्येय है। पराजय उसे नापसंद है। वह दूसरों को पराजित होता देख आनंद से भर उठता है। एक खलनायक उसके भीतर पनप रहा है, उसे यहाँ तक किसने पहुँचाया?

यह इस समय का कड़वा सच है। माँ-बाप धन कमाने की मशीन बन गए हैं। उन्होंने अपने सपनों को मार दिया है। बच्चों को शीर्ष पर पहुँचाने की चाहत में वे इस बात से बेखबर हैं कि उनके बच्चे के पैरों के नीचे से जमीन खिसक रही है। समाज के प्रति संवेदनहीन मानसिकता में जीता हुआ बच्चा कामयाब तो हो सकता है, लेकिन यह कामयाबी उसे इंसान नहीं बना पाएगी। दूसरी ओर, माँ-बाप के पास अब बच्चे को लोरी सुना कर थपथपा कर सुलाने का वक्त नहीं है। कान की नसों को फाड़ते बेसुरी आवाजों में बच्चा रम जाता है। माँ-बाप के पास बच्चों को सुनाने के लिए कहानी नहीं है। एकल परिवार के चलते दादा-दादी और नाना-नानी तो पहले ही गुम हो चुके हैं।

अब बच्चों को खाने में दूध-भात नहीं दिया जाता, बल्कि अब उनके खाने के लिए मैगी या ऐसा ही कोई फास्टफूड है। बच्चों की जरूरत का हर जवाब माँ-बाप के पास पैसा है। यह समय बेहद डराने वाला है। इस समय ने बच्चों के सपनों को गुमशुदा कर दिया है। वे कल्पना के बिना जी रहे हैं। उनमें जिज्ञासा नहीं बची है। बची है तो जीत लेने की होड़। जीत और हार के बीच धीमे-धीमे बड़े होते इन बच्चों को कौन वापस ले जाएगा उनके सपनों की दुनिया में, यह सवाल जवाब के इंतजार में है। कहते हैं सपनों का मर जाना सबसे बुरा होता है और हम इस बुरे समय के साक्षी बनने लिए मजबूर हैं। कहीं हम खुद ही तो बच्चों के सपनों का कत्ल नहीं कर रहे हैं! ❑

यू.जी.सी. ने किया नियमों में बदलाव

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) ने पीएचडी के नियमों में बदलाव किया है। इसके तहत अब दो साल में एमफिल और छह साल में पीएचडी पूरी करनी अनिवार्य होगी। महिलाओं को पीएचडी के दौरान 240 दिन का मातृत्व अवकाश और बच्चों को देखभाल के लिए छुट्टियाँ मिलेगी। इस बारे में अधिसूचना जारी कर दी गई है। यूजीसी के फैसलों के अनुसार महिलाओं को एमफिल के लिए एक साल और पीएचडी के लिए दो साल का अतिरिक्त समय मिल सकेगा। बीच में उन्हें एक संस्थान से दूसरे संस्थान में क्रेडिट ट्रांसफर की सुविधा भी होगी। इसके अलावा पीएच-डी के लिए प्रोफेसर एवं सहायक प्रोफेसरों की संख्या को भी लचीला बनाया गया है। यूजीसी ने डीम्ड विश्वविद्यालयों के लिए नियम कड़े किए हैं। अब किसी संस्थान को पहले पाँच साल के लिए अस्थाई मान्यता मिलेगी और उसमें खरा उतरने पर ही स्थाई रूप से डीम्ड विश्वविद्यालय को मान्यता मिलेगी। दूसरे, पाँच साल से पहले डीम्ड विश्वविद्यालय को ऑफ कैंपस खोलने की इजाजत नहीं होगी। हालांकि उन्हें दूसरे विश्वविद्यालय का क्रेडिट ट्रांसफर लेने की इजाजत दे दी गई है। वहीं सरकारी डीम्ड विश्वविद्यालय में सरकार की आर्थिक अनियमितताओं की स्थिति में कुलपति को हटाने का अधिकार दिया गया है। साथ ही यूजीसी डीम्ड विश्वविद्यालय को निर्देश जारी कर सकेंगे। यूजीसी ने पॉलीथिन से होने वाले नुकसान के मद्देनजर देश के सभी विश्वविद्यालयों में पॉलीथिन के प्रयोग पर प्रतिबंध लगा दिया है। नए आदेश पर कुमाऊँ विश्वविद्यालय ने भी विश्वविद्यालय के आयोजनों में पॉलीथिन झंडे एवं सामग्री पर प्रतिबंध लगा दिया है। कुछ लोगों ने आयोग को पत्र भेजकर शिकायत दर्ज कराई थी कि देशभर के कॉलेजों में होने वाले समारोहों में बड़ी संख्या में प्लास्टिक के झंडे और सामग्री का उपयोग किया जाता है। यूजीसी ने कुछ शर्तों के साथ 2009 से पूर्व पीएचडी करने वालों को भी शिक्षक नियुक्त किए जाने की अधिसूचना जारी कर दी है। इसके लिए कुछ शर्तें लगाई गई है। जैसे पीएच.डी. नियमित होनी चाहिए। बाहरी विशेषज्ञों द्वारा उसकी जाँच की गई हो आदि। यूजीसी ने शिक्षकों को प्रोन्नति के लिए एपीआई मानकों में भी बदलाव किए हैं। इसमें विभिन्न श्रेणियों में एक निश्चित अंक हासिल करने की अनिवार्यता खत्म कर दी गई है। इसके अलावा विश्वविद्यालयों में यौन उत्पीड़न की घटनाओं की जाँच के लिए समितियाँ बनाने का फैसला लिया गया है। जिसमें महिला कार्मिक के साथ-साथ छात्राओं को भी शामिल किया गया है। आशा की जाती है कि नियमों में किए गए बदलाव के बाद विश्वविद्यालयों में व्याप्त अनियमितताओं की शिकायतों में कमी आएगी और विश्वविद्यालयों और डीम्ड विश्वविद्यालयों के माहौल में सुधार आयेगा।

कोचिंग का इलाज

किसी भी प्रतियोगिता परीक्षा की तैयारी के लिए कोचिंग संस्थानों की भूमिका आज किसी से छिपी नहीं है। आज हालत यह है कि शिक्षा जगत के दायरे में इसे कोचिंग उद्योग के नाम से जाना जाने लगा है। खासतौर पर इंजीनियरिंग के पाठ्यक्रम में दाखिले के लिए ज्यादातर विद्यार्थियों के लिए कोचिंग संस्थानों पर निर्भरता आज एक बड़ी समस्या बन चुकी है, लेकिन मानव संसाधन विकास मंत्रालय की ताजा पहल अगर मूर्त रूप लेती है तो यह विद्यार्थियों के लिए एक बड़ी राहत की बात होगी। मंत्रालय ने एक मोबाइल पोर्टल और ऐप लाने का इरादा जताया है, ताकि इंजीनियरिंग में दाखिले की तैयारी करने वाले विद्यार्थियों के लिए कोचिंग की मजबूरी खत्म की जा सके। चूंकि इंजीनियरिंग के पाठ्यक्रम, आयु, अवसर और परीक्षा का ढाँचा कुछ ऐसा है कि विद्यार्थियों के सामने कम अवधि में कामयाब होने की कोशिश एक बाध्यता होती है इसलिए वे सीधे-सीधे कोचिंग संस्थानों का सहारा लेते हैं।

अब अगर मोबाइल पोर्टल और ऐप की सुविधा उपलब्ध होती है, तो इससे इंजीनियरिंग में दाखिले की तैयारी के लिए विद्यार्थियों के सामने कोचिंग के मुकाबले बेहतर विकल्प खुलेंगे। दरअसल, कोचिंग संस्थान अपने यहां पढ़ाई करने वालों से इसी दावे के साथ अनाप-शनाप मोटी रकम वसूलते हैं कि उनके यहां बेहतरीन शिक्षक हैं जो सफलता को लगभग सुनिश्चित करते हैं। अब मोबाइल पोर्टल और ऐप पर इस पाठ्यक्रम के विभिन्न विषयों पर आइआइटी शिक्षकों के व्याख्यान के साथ-साथ प्रतिष्ठित इंजीनियरिंग संस्थानों के पिछले पचास सालों की प्रवेश परीक्षा के प्रश्नपत्र होंगे। सबसे अहम पहलू यह है कि इन सुविधाओं के लिए विद्यार्थियों को अलग से कोई शुल्क नहीं देना होगा। इसके अलावा, यह भी तय किया गया है कि आइआइटी-जेईई प्रवेश परीक्षा के प्रश्न बारहवीं कक्षा के पाठ्यक्रम के अनुरूप होंगे। अभी तक इसकी तैयारी के लिए पढ़ाई का दायरा काफी बड़ा रहा है। जाहिर है, बारहवीं कक्षा के पाठ्यक्रम को पहले ही पढ़ चुके छात्रों के लिए यह एक बड़ी राहत होगी।

राजस्थान का कोटा शहर आज आइआइटी-जेईई में दाखिले की तैयारी के लिए कोचिंग संस्थानों का एक केंद्र बन चुका है। लेकिन इसी शहर में पिछले कुछ समय से चिंता का सबब बने विद्यार्थियों की आत्महत्या के सिलसिले में अनेक दूसरे पहलुओं के अलावा एक कारण कोचिंग संस्थानों की व्यवस्था, फीस, अनुशासन, दिनचर्या, पढ़ने के घंटे से लेकर विद्यार्थियों के प्रति उनका रवैया भी सामने आया है। कोचिंग के प्रचार के मकसद से कामयाबी को अनिवार्य बनाने लिए विद्यार्थियों पर दबाव उनमें से कइयों को अवसाद से भर देता है।

उम्मीद की जानी चाहिए कि मानव संसाधन विकास मंत्रालय की पहल इंजीनियरिंग के क्षेत्र में भविष्य बनाने के प्रति बढ़ते आकर्षण को देखते हुए इसकी तैयारी को पूरी तरह बाजार आधारित बना देने वाले कोचिंग संस्थानों के वर्चस्व को तोड़ने में सहायक साबित होगी। इस संदर्भ में मानव संसाधन विकास मंत्री स्मृति ईरानी ने शिक्षा के व्यावसायीकरण पर भी चिंता जताई है। लेकिन घोर व्यावसायीकरण इंजीनियरिंग की तैयारी तक सीमित नहीं है। देश भर में शिक्षा-व्यवस्था जिस तरह धीरे-धीरे बाजार के हवाले होती जा रही है, उसका सबसे बड़ा खमियाजा समाज के कमजोर तबकों को भुगतना है। इसलिए व्यावसायीकरण से निजात दिलाने का तकाजा इंजीनियरिंग ही नहीं, मेडिकल समेत दूसरी पेशेवर पढ़ाइयों में भी है। ❑

पुराना जातिवाद बेशक गलत था पर आज का नव जातिवाद कितना सही या न्यायपरक है? क्या इस विषमतामूलक नव जातिवाद को पोसते रहने की वजह से उच्च शिक्षा पाकर भी हमारे युवा संकीर्ण और सामंती विचारों वाले नहीं बन रहे हैं? बहुचर्चित 'जेन एक्स' के कई मेधावी टॉपर बेझिझक बताते रहते हैं कि शुद्ध ज्ञान, शोध या पठन पाठन जैसे रास्ते उनके लिए प्रशासकीय, कारपोरेट, बैंकिंग से जुड़े जॉब्स के आगे कतई 'कूल' नहीं। राष्ट्रहित की बजाय स्वार्थ के चश्मे से शिक्षा को तौलने वाले ऐसे छात्रों का बीबी या जॉब का चयन भी शैक्षिक क्षमता नहीं बल्कि टोटल पैकेज के आधार पर करना आम है और उतना ही आम है अधबीच पढ़ाई छोड़ने को मजबूर कई छात्रों का दबंगई के प्रदर्शन, कार चोरी या झपट्टामारी को मजाकिया शरारत मानना।

दाखिले का अंकगणित

❑ **मृणाल पाण्डे**

अंग्रेजी के एक लेखक (जी. के. चेस्टरटन) के अनुसार शिक्षा ही वह माध्यम है, जिसके द्वारा जाती हुई पीढ़ी नई पीढ़ी में अपनी आत्मा का प्रवेश करा जाती है, लेकिन भारत की मौजूदा उच्च शिक्षा प्रणाली के हाल ऐसे हैं कि पुरानी पीढ़ी की आत्मा का नई पीढ़ी में सहज अवतरण तकरीबन असंभव है। शैक्षणिक नहीं, राजनीतिक वजहों से बार-बार तब्दील की गई नीतियों ने विश्वविद्यालयीन परिसरों को परीक्षा और दाखिला प्रणालियों के चक्रव्यूह से घेर कर सहज प्रतिभा प्रवाह और शोध कार्य के लिए अगम्य बना दिया है। प्रवेश द्वार पर सवालों के जवाब टिक लगाकर देने से हिचकिचाते अनेक मेधावी छात्र और शोधार्थी अक्सर भीतर नहीं जा पाते, पर ट्यूशनी रटंत और कोटा प्रणाली से आए कई मंझोले स्तर के छात्र मजे से उबर जाते हैं। नतीजतन परिसरों में कुंठा तो काफी बढ़ ही रही है, ज्ञान व शोध का स्तर भी नहीं है। पिछले साल दिल्ली के कुछ जाने-माने कालेजों में गणित, कॉमर्स और अर्थशास्त्र सरीखे चहेते विषयों में दाखिला पाने की अर्हता (कट ऑफ) 100 प्रतिशत तक जा पहुँची फिर बताया गया कि दाखिला खुलने के हफ्ते भर के भीतर वहाँ उपलब्ध सामान्य श्रेणी की सब सीटें भर गईं। इस बार भी नब्बे प्रतिशत तक अंक पाकर भी मनचाहे विषय से वंचित रहने जा रहे छात्रों की तादाद काफी रहेगी और संभव है कि कुछ टॉपर भी अपने मनचाहे विषयों में दाखिला न पा सकें।

कॉलेज सफाई देते हैं, वे मजबूर हैं। लगातार सिकुड़ती फैकल्टी के फटाफट चयन में कई तकनीकी अड़ंगे हैं। परिसर तथा हॉस्टल के कमरे भी सीमित हैं। तब वे दोगुनी-तिगुनी तादाद में दाखिले कैसे करें? शीर्ष तकनीकी और मैनेजमेंट शिक्षा के परिसरों में कई महत्त्वपूर्ण विषय पढ़ाने को आरक्षित कोटे में व्याख्याताओं की स्थाई नियुक्तियाँ (विज्ञापन देकर भी समुचित आवेदक

न मिलने से) नहीं हो पातीं। यह सीटें चूंकि गैर कोटा श्रेणी के तहत भरना मना है इसलिए सालों से तदर्थवादी आधार पर प्रवक्ताओं की नियुक्ति हो रही है। इससे मेधावी छात्र इच्छा होते हुए भी शिक्षण में कॅरियर बनाना असुरक्षित मानने लगे हैं और अब माँग हो रही है कि कॉलेजों में प्रवक्ताओं की नियुक्ति ही नहीं, प्रोफेसर या डीन सरीखे सीनियर पदों पर उनकी प्रोन्नति भी कोटा प्रणाली के ही आधार पर ही की जाए। इसका राजनीतिक आधार भले ही तगड़ा हो, पर व्यावहारिक रूप से यह करना शिक्षा के स्तर से खिलवाड़ साबित हो सकता है।

यह एक दुखद सच है कि भारत में पारंपरिक रूप से उच्च शिक्षा सदियों तक सवर्णो की ही बपौती बनी रही, पर जब दलित, आदिवासी और पिछड़े वर्गो के युवाओं को वहाँ सहजता से प्रवेश दिलवाने को कोटा प्रणाली लागू की गई तो बिना ढाँचे में जरूरी परिवर्तन किए। बीस साल बाद भी अधिकतर कोटा वर्ग के छात्रों का हाल देखकर महादेवी वर्मा की स्मृति के रेखाचित्र माला में उकेरा गया 'घीसा' याद आता है, जिसके प्रति कवियित्री गुरु के वरदहस्त ने उसको शेष सहपाठियों के बीच उपहास और अत्याचार का शिकार बना दिया था। कोटा प्रणाली लागू करने के बावजूद एक तरफ सरकारी स्कूली शिक्षा में भाषाई माध्यम और दूसरी तरफ उच्च शिक्षा के नामी केंद्रों में योग्यतम गुरुओं के चयन और ज्ञान के आदान-प्रदान का आधार अंग्रेजी का द्वैत लगातार टकराव पैदा करता है। इससे सरकारी स्कूलों में भारतीय भाषाओं के माध्यम से पढ़कर निकले मेधावी छात्रों का भविष्य डगमगाता है। दाखिला हो भी गया तो रातों रात उनका भारतीय भाषा का ज्ञान और भारतीय जीवन के जमीनी अनुभव हमारे उच्च शिक्षा परिसरों में व्यर्थ बन जाते हैं और उनका कोटा के तहत आगमन शेष सहपाठियों के साथ सहज पैठ और मित्रता को रोकता है। नतीजा यह कि आज परिसरों में 'इंग्लिश मीडियम' और 'देसी' टाइप्स कहे जाने वाले छात्रों के बीच एक नई तरह की सवर्ण व्यवस्था बन गई है। आरक्षित वर्ग के बच्चों में अपने समुदाय के पिछड़ेपन का बोध उनको असहज बनाता है और सवर्ण समुदाय के कई बच्चे उनसे अकारण खार खाते हैं।

इधर अंकों के आधार पर दाखिले से वंचित संपन्न छात्रों की तादाद और अभिभावकों की महत्वाकांक्षा बढ़ने के साथ मोटी फीस के आधार पर दाखिला देने (लेकिन अक्सर विवादित गुणवत्ता वाले) वाले निजी कालेजों की बाढ़ आ गई है जहाँ शायद ही कोई अवर्ण या जनजातीय समुदाय का छात्र जा पाता है। खुद सवर्ण बहुल कैंपस से निकले छात्रों का इस सबकी वजह से सामान्य जीवन या गरीबों से कोई सीधा भावनात्मक या भौतिक रिश्ता नहीं बनता। पुराना जातिवाद बेशक गलत था पर आज का नव जातिवाद कितना सही या न्यायपरक है? क्या इस विषमतामूलक नव जातिवाद को पोसते रहने की वजह से उच्च शिक्षा पाकर भी हमारे युवा संकीर्ण और सामंती विचारों वाले नहीं बन रहे हैं? बहुचर्चित 'जेन एक्स' के कई मेधावी टॉपर बेझिझक बताते रहते हैं कि शुद्ध ज्ञान, शोध या पठन पाठन जैसे रास्ते उनके लिए प्रशासकीय, कारपोरेट, बैंकिंग से जुड़े जॉब्स के आगे कतई 'कूल' नहीं। राष्ट्रहित की बजाय स्वार्थ के चश्मे से शिक्षा को तौलने वाले ऐसे छात्रों का बीबी या जॉब का चयन भी शैक्षिक क्षमता नहीं बल्कि टोटल पैकेज के आधार पर करना आम है और उतना ही आम है अधबीच पढ़ाई छोड़ने को मजबूर कई छात्रों का दबंगई के प्रदर्शन, कार चोरी या झपट्टामारी को मजाकिया शरारत मानना। सामाजिक दायित्वबोध का यह हाल है कि हर साल मेडिकल या आइआइटी प्रवेश परीक्षाओं में टॉप करने वाले कई छात्र साफ कहते फिरते हैं कि डॉक्टरी या इंजीनियरी में कइयों को वंचित कर पाई उनकी सीट दरअसल उनके 'रियल' कॅरियर की एक सीढ़ी भर है, अंततः वे सिविल सर्विस या मनीजरी में जाएँगे।

इस स्थिति को स्वागत योग्य कहें या दिल तोड़ने वाली या उसे सिर्फ स्वीकार कर लें? स्वीकार करने का मतलब हुआ कि हम मान लें कि उच्च शिक्षा की दुनिया में प्रवेश कर रहे हमारी नई पीढ़ी के लिए पढ़ाई का मतलब जाति, नौकरी व धन ही होता जायेगा। बिना जरूरत भी सीट हथियाने या ज्ञान की परंपरा को लगातार आगे न बढ़ा पाने को लेकर उनमें कोई अपराध बोध नहीं होगा। हित स्वार्थ जो भी हों, यह तो मानना ही होगा कि यह सब विषमता को स्थायी बनाकर ज्ञान का सहज विकास कुंठित करना ही है और जो वह चोर दरवाजों से फर्जी डिग्रियाँ बाँटने वाले कालेजों, नकली जाति सर्टिफिकेट बनवाने वाले बाबूओं और ट्यूटोरियल की मार्फत देश में भ्रष्टाचार करने की लाखों नई राहें भी बना रहा है सो अलग। सवाल इस या उस जातिवाद की तुलनात्मक विवेचना का नहीं, सवाल यह है कि उच्च शिक्षा की जड़ों को अगर निरुद्देश्य या किसी दलगत उद्देश्य से कमजोर किया जा रहा हो तो क्या उसे कमजोर होने दिया जाए? ❑

(वरिष्ठ स्तंभकार और प्रसार भारती की पूर्व प्रमुख)

उच्च शिक्षा को चाहिए नई चाल-ढाल

उच्च शिक्षा के कायापलट की एक कसौटी यह भी होगी कि किस तरह हमारे विश्वविद्यालय सिर्फ डिग्रियाँ बाँटने का काम न करते हुए नवाचार (इनोवेशन), शोध-अनुसंधान और उद्यमिता के केंद्र बनें। रोबोटिक्स, आर्टिफिशियल इंटेलीजेंस, वर्चुअल रियलिटी, थ्रीडी प्रिंटिंग औरा मूक्स जैसी तकनीक विकसित देशों की उच्च शिक्षा में क्रांतिकारी परिवर्तन ला रही है। क्या भारत की उच्च शिक्षा इनके प्रति सजग है और क्या वह भविष्य में इन्हें अपनाने में सक्षम साबित होगी? उच्च शिक्षा का रूपांतरण और कायापलट भारतीय लोकतंत्र की बड़ी जरूरत है, किंतु हमारी राजनीति के प्रमुख एजेंडे पर इसे स्थापित करना फिलहाल बहुत मुश्किल होगा।

❑ हरिवंश चतुर्वेदी

इन दिनों देश का मानव संसाधन विकास मंत्रालय नई शिक्षा नीति घोषित करने की तैयारियों में लगा है। मौजूदा शिक्षा नीति 1986 में बनी थी, जिसे 1992 में संशोधित किया गया था। पिछले 24-25 वर्षों में भारत की अर्थव्यवस्था, राजनीति, समाज और संस्कृति में भारी फेरबदल हुए, मगर उच्च शिक्षा बदस्तूर पुरानी रफ्तार से चलती रही।

किसी भी शिक्षाविद् से पूछिए, तो वह यही कहेगा कि शिक्षा साल-दर-साल गिरावट के कीर्तिमान बना रही है। यह ऐसी गिरावट है, जिसकी हर कोई निंदा जरूर करेगा, लेकिन कोई भी उसकी जिम्मेदारी लेने को तैयार नहीं होता। यदि उच्च शिक्षा के कायापलट पर ध्यान नहीं दिया गया, तो देश की बढ़ती हुई युवा आबादी के आधार पर देखा गया 'डेमोग्राफिक डिविडेंट' का सुनहरा सपना 'डेमोग्राफिक डिजास्टर' के दु:स्वप्न में बदल सकता है।

हमें सचेत हो जाना चाहिए कि भारत ही नहीं, समूची दुनिया में ऊँची विकास दर समुचित मात्रा में रोजगार पैदा नहीं कर पा रही है। यूएनडीपी की हाल की रिपोर्ट के अनुसार, 1991 और 2013 के दौरान यानी उदारीकरण के 22 वर्षों में 30 करोड़ लोग रोजगार पाने की कतारों में खड़े थे, लेकिन 14 करोड़ यानी 50 प्रतिशत से भी कम को रोजगार मिल पाया।

इसी रिपोर्ट का कहना है कि साल 2050 तक भारत की युवा आबादी अपनी अधिकतम ऊँचाई तक पहुँच जाएगी। अगले 34 वर्षों में हमें 28 करोड़ रोजगार पैदा करने होंगे। अगर भविष्य में हर साल 80 से 90 लाख रोजगार सृजित नहीं हुए, तो यह सामाजिक उथल-पुथल का कारण बनेगा। अभी हाल के महीनों में हरियाणा, गुजरात व आंध्र प्रदेश में जो हिंसक आंदोलन हुए, उनकी प्रमुख माँग थी- सरकारी नौकरियों में आरक्षण। यह बात और है कि आरक्षण उनकी बेरोजगारी का कारगर हल नहीं है।

उच्च शिक्षा के भावी स्वरूप पर अनेक सवाल उठने लाजिमी हैं, लेकिन सबसे अहम सवाल यह है कि 160 वर्ष पुरानी हमारी जीर्ण-शीर्ण उच्च शिक्षा व्यवस्था में पैबंद लगाकर हम कब तक काम चलाते रहेंगे? क्या देश की उच्च शिक्षा व्यवस्था मामूली सुधारों से लोगों की आशाओं को पूरा कर पाएगी या फिर उसमें आमूल-चूल परिवर्तन करने का वक्त अब आ गया है? साल 1991 में आर्थिक उदारीकरण के दौरान कहा गया था कि आर्थिक संपन्नता व उद्यमिता की प्रतीक देवी लक्ष्मी अब लाइसेंस-कोटा-परमिट राज से मुक्त हो गई है।

उदारीकरण के 25 वर्ष के बाद भी लोगों का कहना है कि लक्ष्मी अपनी जंजीरों से भले मुक्त हो गई हों, लेकिन विद्या की देवी सरस्वती अब भी अनेक प्रकार की जंजीरों में कैद हैं। देश में उच्च शिक्षा में सुधार पर बहस पिछले 10 वर्षों से चल रही है। यूपीए-2 की सरकार के दौरान सैम पित्रोदा की अध्यक्षता वाले राष्ट्रीय ज्ञान आयोग और प्रोफेसर यशपाल कमेटी की रिपोर्टों में अनेक बुनियादी सुझाव दिए गए थे, किंतु एक मुख्य सुझाव था कि यूजीसी, एआईसीटीई व एमसीआई जैसी नियामक एजेंसियों का विलय करके एक राष्ट्रीय स्तर का आयोग स्थापित किया जाए। इसी दौरान तत्कालीन मानव संसाधन विकास मंत्री कपिल सिब्बल ने संसद में उच्च शिक्षा पर सात विधेयक पेश किए थे, लेकिन राजनीतिक दलों में आम सहमति न बन पाने के कारण कोई भी विधेयक पारित नहीं हो पाया।

पिछले दो वर्षों में एनडीए की मौजूदा सरकार का ध्यान अर्थव्यवस्था को दुरुस्त करने, खासतौर से आर्थिक विकास की दर को बढ़ाने पर ज्यादा केंद्रित रहा है। किंतु मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने वर्ष 2014 में यूजीसी और एआईसीटीई की अकर्मण्यता और दिशाहीनता पर गौर करते हुए हरी गौतम और एम के काव की अध्यक्षता में दो जाँच समितियाँ बैठाई थीं, जिनकी रिपोर्ट मंत्रालय में जमा हो चुकी हैं। अभी यह देखना बाकी है कि इनकी कौन-सी सिफारिशें अमल में लाई जायेंगी और कौन-सी ठंडे बस्ते में पड़ी रहेंगी।

भारत की उच्च शिक्षा को 21वीं सदी के अनुरूप बनाना एक भगीरथ-प्रयत्न होगा। इसमें

अकेले केंद्र सरकार के बूते कामयाबी नहीं मिल पाएगी। इसके लिए राज्य सरकारों, शिक्षाविदों, राजनीतिक दलों, निजी संस्थाओं और औद्योगिक क्षेत्र के प्रतिनिधियों को भी आगे आना होगा। उच्च शिक्षा के सुधारों का सवाल 'अंधों का हाथी' नहीं बनना चाहिए। यह सवाल हर स्तर पर उठना चाहिए कि इन बुनियादी परिवर्तनों की दिशा क्या होगी और समाज के सभी वर्गों को कैसे फायदा पहुँचेगा?

उच्च शिक्षा में आमूल-चूल बदलाव में सबसे अहम मुद्दा होगा कि सरकारी और निजी विश्वविद्यालयों को अकादमिक, विधायी और वित्तीय स्तर पर किस तरह अधिकतम स्वायत्तता दी जाए, जिससे कि वे अपने फैसले त्वरित ढंग से ले सके। जाहिर है, इसके लिए यूजीसी, एआईसीटीई, एमसीआई, एनसीटीई आदि की दखलंदाजी को सीमित करना पड़ेगा। स्वायत्तता का दूसरा पहलू यह है कि सभी विश्वविद्यालयों में पारदर्शिता व जवाबदेही बढ़ाई जाए। हर विश्वविद्यालय और कॉलेज को सामाजिक रूप से प्रतिबद्ध बनाते हुए अपने आसपास के इलाकों में परिवर्तन का प्रतीक बनना पड़ेगा।

उच्च शिक्षा के कायापलट की एक कसौटी यह भी होगी कि किस तरह हमारे विश्वविद्यालय सिर्फ डिग्रियाँ बाँटने का काम न करते हुए नवाचार (इनोवेशन), शोध-अनुसंधान और उद्यमिता के केंद्र बनें। रोबोटिक्स, आर्टिफिशियल इंटेलीजेंस, वर्चुअल रियलिटी, थ्रीडी प्रिंटिंग औरा मूक्स जैसी तकनीक विकसित देशों की उच्च शिक्षा में क्रांतिकारी परिवर्तन ला रही है। क्या भारत की उच्च शिक्षा इनके प्रति सजग है और क्या वह भविष्य में इन्हें अपनाने में सक्षम साबित होगी? उच्च शिक्षा का रूपांतरण और कायापलट भारतीय लोकतंत्र की बड़ी जरूरत है, किंतु हमारी राजनीति के प्रमुख एजेंडे पर इसे स्थापित करना फिलहाल बहुत मुश्किल होगा।

उच्च शिक्षा में आमूल-चूल बदलाव करते समय हमें यह ध्यान में रखना होगा कि भविष्य में देश का कोई भी वर्ग अच्छी क्वालिटी की उच्च शिक्षा से होने वाले दीर्घकालीन लाभ से वंचित न रह जाए। यह अच्छी शिक्षा का चमत्कार ही कहा जाएगा कि वंचित वर्गों के बच्चे भी अब सिविल-सेवा परीक्षा में कामयाब ही नहीं हो रहे, बल्कि बिना आरक्षण के टॉप रैंक भी ला रहे हैं। उच्च शिक्षा में कायापलट की एक बड़ी कसौटी यह भी होनी चाहिए कि अच्छी क्वालिटी की शिक्षा के अवसर कैसे बढ़ाए जाएँ? फिलहाल देश का सकल नामांकन अनुपात (जीईआर) 24 प्रतिशत है। इसका मतलब है कि 18 से 23 वर्ष के आयुवर्ग के 14 करोड़ भारतीय युवाओं में से सिर्फ 3.5 करोड़ ही कॉलेजों व विश्वविद्यालयों तक पहुँच पा रहे हैं। इस समय चीन और अमेरिका के जीईआर क्रमश: 30 प्रतिशत और 89 प्रतिशत हैं। अगर हम चीन के बराबर भी आना चाहें, तो आने वाले 10-15 वर्षों में एक करोड़ अतिरिक्त युवाओं के लिए उच्च शिक्षा के अवसर जुटाने होंगे। उच्च शिक्षा में अतिरिक्त एक करोड़ युवाओं को जोड़ना एक बड़ी चुनौती होगी, क्योंकि इसके लिए 14,000 नए कॉलेजों और पाँच लाख प्राध्यापकों की जरूरत होगी। एक नए कॉलेज की पूँजीगत लागत करीब 100 करोड़ आँकी जाए, तो अगले 10-15 वर्षों में 30 प्रतिशत जीईआर तक पहुँचने के लिए 14 लाख करोड़ रुपये के पूँजी-निवेश की जरूरत होगी। मुश्किल सवाल यही है कि आखिर इतना सारा निवेश कहाँ से आएगा? ❑

(निदेशक, बिमटेक)

उदारीकरण के साथ पढ़ने के नए आयाम उभर रहे हैं। बाजार और नए किस्म की उभरती शिक्षा प्रणाली के बीच हिंदी भाषी समुदाय का अंगरेजी से संपर्क बढ़ रहा है, वहीं इंटरनेट और मोबाइल तकनीक नए किस्म के पाठकीय अनुभव रच रहे हैं। इंटरनेट ने एक नई पाठकीय दुनिया का निर्माण किया है, जो देशिक सीमाओं के आर पार मौजूद है। यह ऐसा पाठक है, जो स्वाधीनता आंदोलन यानी बीसवीं सदी के पाठक से इस मामले में अलग है कि इसके संवेदन जगत् में राष्ट्रीय मुक्ति के सवालों से अधिक महत्त्वपूर्ण मानवता और पर्यावरणिक प्रश्न हैं। साहित्य के पारंपरिक पाठक जिस तरह किसी पाठ से अर्थ का निर्माण करते थे, उससे भिन्न तरीके से यह पाठक अर्थ का निर्माण करता है।

पठन का बदलता चलन

❑ **दुर्गा प्रसाद सिंह**

पिछले कुछ सालों में पढ़ने की प्रक्रिया में आए बदलाव प्रकट हैं। पारंपरिक साहित्य की जगह हमारे जीवन में बदली है। मसलन, अब एक उपन्यास को माँग कर पढ़ने वाले कम मिलते हैं। 'क्लासिक' की जगह 'बेस्टसेलर' ने ले ली है। किताबों से एकात्म्य की प्रक्रिया रुक-सी गई है। ऐसा नहीं कि दुनिया या भारत के शिक्षित वर्ग में पढ़ना कम हो गया है। पढ़ने की जगह अब भी बची है, लेकिन उसमें बड़ा बदलाव आया है। पढ़ने के पारंपरिक ढंग को धकिया कर वर्चुअल रीडिंग ने ले ली है। समाचार, लेख, ब्लॉग-पोस्ट, फेसबुक अनेक तरह के पढ़ने के आयाम हैं।

पढ़ना मानवीय क्रियाकलाप का महत्त्वपूर्ण पक्ष है। सामूहिक और व्यक्तिगत चेतना को गढ़ने में 'पढ़ने की संस्कृति' की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। यूरोप से लेकर एशिया तक आधुनिकता के विस्तार में 'पढ़ने की संस्कृति' निर्णायक रही है। आधुनिक काल का इतिहास इस बात का गवाह है कि तमाम सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तनों को गढ़ने में 'पढ़ने की संस्कृति' प्रमुख कारक रही है। बंगाल नवजागरण की परिकल्पना पढ़े-लिखे मध्यवर्ग के बिना नहीं की जा सकती। भारत में छापेखाने की स्थापना के बाद लोकवृत्त में धर्म और विवेक की चर्चा को इसी संदर्भ में देखा जा सकता है। धर्म, विवेक और परंपरा की यही चर्चा आगे चल कर उपनिवेश-विरोधी चेतना में परिवर्तित हो जाती है।

स्वाधीनता आंदोलन के दौरान भाषा, उपनिवेश का औचित्य, धन की निकासी से लेकर आजादी तक की बहसें पढ़ने की प्रक्रिया का परिणाम थीं। हिंदी नवजागरण का विकास जिस रूप में हुआ, उसमें पढ़े-लिखे वर्ग की भूमिका किसी से छिपी नहीं है। पढ़ने की संस्कृति का प्रभाव शिक्षित मध्यवर्ग तक सीमित नहीं किया जा सकता। उसका विस्तार अन्य लोगों में होना स्वाभाविक है। इसे उपनिवेश-विरोधी चेतना के स्वाधीनता आंदोलन में तब्दील होने से समझा जा सकता है। पढ़ने का प्रभाव कितना दूरगामी होता है, इसे ब्रिटिश उपनिवेश के दौर में शिक्षित वर्ग के विकास से समझा जा सकता है। जिस शहरी मध्यवर्ग को ब्रिटिश राज ने ब्रिटिश साम्राज्य को आगे बढ़ाने के लिए विकसित किया, उसी ने उपनिवेश-विरोधी चेतना के विस्तार में निर्णायक भूमिका निभाई। ये परिवर्तन छापेखाने के विकास के बिना संभव नहीं थे।

क्रिस बायल ने भारत में छापेखाने के विकास की चर्चा करते हुए लिखा कि 'जब प्रिंटिंग प्रेस की तकनीक यूरोप में आम हो चली थी तब भारत में प्रिंटिंग प्रेस का आगमन हुआ, लेकिन उल्लेखनीय यह है कि 1920-40 के बीच भारत के आधुनिक होते अभिजन ने इसका अभूतपूर्व और तेजी से विस्तार किया।'

पठन संस्कृति का प्रभाव कितना दूरगामी होता है, इसे बेनेडिक्ट एंडरसन की 'इमेजिंड कम्युनिटीज' में देखा जा सकता है। एंडरसन ने यूरोप में विकसित हो रही उप-राष्ट्रीयताओं को सोलहवीं शताब्दी में प्रिंटिंग प्रेस के आगमन का परिणाम माना। वे लेटिन से उपजी यूरोपीय वर्नाकुलर रीडिंग-कल्चर को यूरोप में राष्ट्रीयताओं का कारक मानते हैं। उनकी धारणा इस बात की ताकीद करती है कि कल्पना आधारित निर्मिति किस तरह वास्तविकता में बदल जाती है। एडवर्ड सईद ने ओरिएंटलिज्म के संदर्भ में इमेजिंड जियोग्राफीज का उपयोग अनिवासी के लिए किया। हैबरमास ने लोकवृत्त निर्मित करने में प्रिंट-मीडिया को महत्त्वपूर्ण माना।

यह समझना मुश्किल नहीं है कि पढ़ने की संस्कृति के प्रभाव दूरगामी होते हैं। इसकी प्रमुख वजह आम जन में प्रिंट के अनुकरण की प्रवृत्ति है, लेकिन विभिन्न युगों में इस अनुकरण की अभिव्यक्ति एक जैसी नहीं, बल्कि संश्लिष्ट रही है।

उदारीकरण के साथ पढ़ने के नए आयाम

उभर रहे हैं। बाजार और नए किस्म की उभरती शिक्षा प्रणाली के बीच हिंदी भाषी समुदाय का अंगरेजी से संपर्क बढ़ रहा है, वहीं इंटरनेट और मोबाइल तकनीक नए किस्म के पाठकीय अनुभव रच रहे हैं। इंटरनेट ने एक नई पाठकीय दुनिया का निर्माण किया है, जो देशिक सीमाओं के आर पार मौजूद है। यह ऐसा पाठक है, जो स्वाधीनता आंदोलन यानी बीसवीं सदी के पाठक से इस मामले में अलग है कि इसके संवेदन जगत में राष्ट्रीय मुक्ति के सवालों से अधिक महत्त्वपूर्ण मानवता और पर्यावरणिक प्रश्न हैं। साहित्य के पारंपरिक पाठक जिस तरह किसी पाठ से अर्थ का निर्माण करते थे, उससे भिन्न तरीके से यह पाठक अर्थ का निर्माण करता है।

बीसवीं सदी के पाठक की चिंताओं में राजनीति को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त था, लेकिन इस नए पाठक की चिंताओं का निर्माण सांस्कृतिक अस्मिता कर रही है और ये अस्मिताएँ नए तरह के मीडिया से निर्मित हो रही हैं। मीडिया के नए रूपों ने भाषा, लिंग, नस्ल, स्वाद आदि अस्मिता निर्माण के नए घटकों को जन्म दिया है। मीडिया के इसी बदलाव की प्रभविष्णुता के आकलन के लिए यूनेस्को ने मैकब्राइट की अध्यक्षता में एक आयोग का गठन किया, जिसने माना कि मीडिया के लिए संदेश या माध्यम के बजाय संदर्भ अधिक महत्त्वपूर्ण कारक होता है। यानी संदेश का ग्रहिता उसे अपने लिंगीय, भाषिक, जातीय, नस्ली संदर्भ में ग्रहण करता है। प्रसारित हो रहे संदेश में अपने संदर्भ से अर्थ भरने की इसी प्रक्रिया में पाठक व्यापक सांस्कृतिक विमर्श का अंग बन कर नई अस्मिताओं का सृजन करता है। मीडिया में प्रसारण पर एकाधिकार और ग्रहण में विविधता को नए युग में टकराव का सबसे प्रमुख बिंदु माना जाता है, जिसके तहत ये 'पाठकीय अस्मिताएँ' मूलतः प्रतिनिधित्व की लड़ाई लड़ती हैं। मीडिया जगत में

सांस्कृतिक प्रतिनिधित्व मूलतः सबलीकरण का ही एक रूप है।

हिंदी प्रकाशकों के खोये आँकड़ों को समझने की कोशिश करें तो ऊपरी तौर पर पुस्तकों की बिक्री में इजाफा हुआ है। पर इससे कोई निष्कर्ष निकालने से पहले अंगरेजी साहित्य पढ़ने वालों की संख्या में आए बदलाव पर गौर करने की जरूरत है। हिंदी पाठकों की संख्या का विस्तार एक बात है, लेकिन एक हिंदी पाठक के स्पेस में आया मात्रात्मक और गुणात्मक बदलाव दूसरी बात। नेशनल रीडरशिप के सर्वे लगातार हिंदी पत्रिकाओं और पत्रों के पाठकों की संख्या में इजाफे की बात करते हैं, लेकिन गौर करने की बात है कि क्या सरस्वती, हंस, प्रताप, मतवाला और आज की पत्र-पत्रिकाओं के पाठकों को एक नजरिए से देखना चाहिए। इसी के विस्तार में देखे तो क्या प्रेमचंद के गबन, गोदान और 'फाइव पॉइंट सम वन' को एक तरह से समझा जा सकता है। भारतीय साहित्य चिंतन में 'सहृदय' और 'साधारणीकरण' और 'रस' की अवधारणा रही है। इसलिए समझ और संवेदना की पठन संस्कृति के बाद सूचना की पठन संस्कृति एक महत्त्वपूर्ण स्थानांतरण है, जिसे व्यापक संदर्भों में समझने की जरूरत है। हिंदी का यह नया पाठक लिखित शब्द से अलग तरह की अपेक्षाएँ रखता प्रतीत हो रहा है, क्योंकि उसकी सामाजिक अवस्थिति में अंतर आया है। अब उसके जीवन में निजी और सार्वजनिक का भेद अधिकाधिक खत्म हो रहा है और वह निरंतर प्रतीकों की दुनिया में अलगाव को दूर करने के लिए दखल के नए तरीके खोज रहा है।

पढ़ने की संस्कृति का विस्तार जहाँ छापेखाने के अविष्कार और विभिन्न समाजों के बीच उसके आगमन से तेजी से शुरू होता है, वहीं नई तकनीकी विकास मुद्रित सामग्री के पढ़ने की संस्कृति को समेटता दिखाई देता है। इसका संबंध राजनीतिक और आर्थिक स्तर पर व्यवस्थापरक ढाँचे के निर्माण से भी जुड़ा है। जब हम बाजारवाद कहते हैं, तो वहाँ तकनीक के साथ दूसरे कारक भी पढ़ने की संस्कृति को प्रभावित करते दिखाई पड़ते हैं। पिछले दो दशक में आर्थिक उदारीकरण और इंटरनेट की तकनीक ने सांस्कृतिक बर्ताव और परिदृश्य को निर्णायक ढंग से बदल दिया है। शौक से पढ़ने की परंपरा में बुनियादी बदलाव आए हैं। संवेदना को विकसित करने वाले साहित्य की जगह उपयोगिता प्रधान सामग्री पढ़ने की प्रवृत्ति बढ़ी है। इंटरनेट पर अंगरेजी वर्चस्व के चलते हिंदी भाषी पाठक अंगरेजी सामग्री पढ़ने को मजबूर हुए हैं। ❑

उच्च शिक्षा का उद्देश्य

भौतिक या प्राकृतिक विज्ञानों, समाज विज्ञानों और मानवीकी के विभिन्न विषयों को एक ही तराजू से नहीं तौला जा सकता। इन सबमें ज्ञान की प्रकृति और उनके निर्माण और प्रयोग में सांस्कृतिक संदर्भ की प्रासंगिकता अलग-अलग है। अब उसमें कौशल विकास भी जुड़ रहा है, ज्ञान का उत्पादन भी और ज्ञान का उपयोग भी। उपनिवेशवादी दौर के बाद साम्राज्यवादी मानसिक चिंतन से आजादी आवश्यक है। आज अनुकरण की इच्छा बलवती है और हम बिना सोचे समझे जो कुछ भी कहीं भिन्न दिखता है, अपनाने दौड़ते हैं। उनके पास है तो हमारे पास क्यों न हो इस तर्क का अनुसरण करते हुए अपने को पश्चिमी विश्वविद्यालयों का क्लोन बनाते जा रहे हैं,

आजकल देश में उच्च शिक्षा की कमियों को दूर कर उसमें गुणवत्ता लाने की चर्चा बड़े जोरों पर है। इसके लिए अनेक स्तरों पर तरह-तरह की कवायद की जा रही है, परन्तु इस प्रयास के लिए अपनाए गए संदर्भ और मानक हमारे अपने नहीं हैं। गुणवत्ता के सरोकार के बारे में हमारा ध्यान उन अंतरराष्ट्रीय मानदंडों की ओर ही जा रहा है जो अन्यत्र देश काल के संदर्भ में ठीक हो सकते हैं, लेकिन यह जरूरी नहीं कि वे हर जगह ठीक हों। बावजूद इसके लगभग उन्हीं को पृष्ठभूमि में रख कर गुणवत्ता की पैमाइश की जा रही है और उनके मानकों पर संतुष्ट होने पर शिक्षण संस्थाओं को ए/बी/सी/डी ग्रेड दी जा रही है। प्राध्यापकों की पदोन्नति में एपीआई की गणना हो रही है और इसके चलते आजकल शिक्षा संस्थानों में हम शोध, संगोष्ठी और प्रकाशन की तत्वहीन मारामारी का अद्भुत नजारा देखने को बाध्य हो रहे हैं। गुणहीन शोध पत्रिकाओं की भीड़ लग रही है और शोध में नकल और चोरी की घटनाएँ दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। शिक्षा के परिसर में आज पढ़ने आने वाला युवा विद्यार्थी नहीं, बल्कि अच्छे 'परीक्षार्थी' बनने के लिए ही यत्नशील रहता है। सफलता यानी अच्छे अंक पाने पर उसका जोर निरंतर बढ़ता जा रहा है। ट्यूशन या कोचिंग की जरूरत और उसकी बढ़ती व्यावसायिक गिरफ्त को देखने से यही लगता है कि प्रचलित शिक्षा अधूरी, दोषपूर्ण और अपर्याप्त है। इसलिए सही अर्थों में व्यक्तित्व और कुशलता की वृद्धि की दृष्टि से अव्यावहारिक है।

हम देख रहे हैं कि उच्च शिक्षा किस तरह संचालित हो रही है और किस मुकाम पर पहुँच रही है। यह किसी भी तरह संतोषजनक नहीं है। हम अपने विश्वविद्यालयों की तुलना हार्वर्ड, ऑक्सफोर्ड और एमआईटी जैसी विदेशी संस्थाओं से करना चाह रहे हैं। उनकी ही तर्ज पर जाँच-परख करने पर हमारे श्रेष्ठ विश्वविद्यालय या उच्च शिक्षा के अन्य संस्थान फिसड्डी ही साबित होते हैं और हम अंतरराष्ट्रीय रैंकिंग की सूची में कहीं ठहरते ही नहीं हैं। सूची में ऊपर आने के लिए जो निष्कर्ष तय किए गए हैं वे कुछ सार्वभौम पैमानों को हमारे सामने रखते हैं। मसलन-छात्र संख्या, कक्षा में छात्रों और अध्यापक के बीच का अनुपात, संस्था की प्रतिष्ठा, विदेशों के साथ संबंध, अंतरराष्ट्रीय प्रकाशनों की संख्या इत्यादि। यदि गौर से देखें तो इनमें कई निष्कर्ष हमारे भारतीय समाज के लिए असामान्य हैं और प्रासंगिकता की

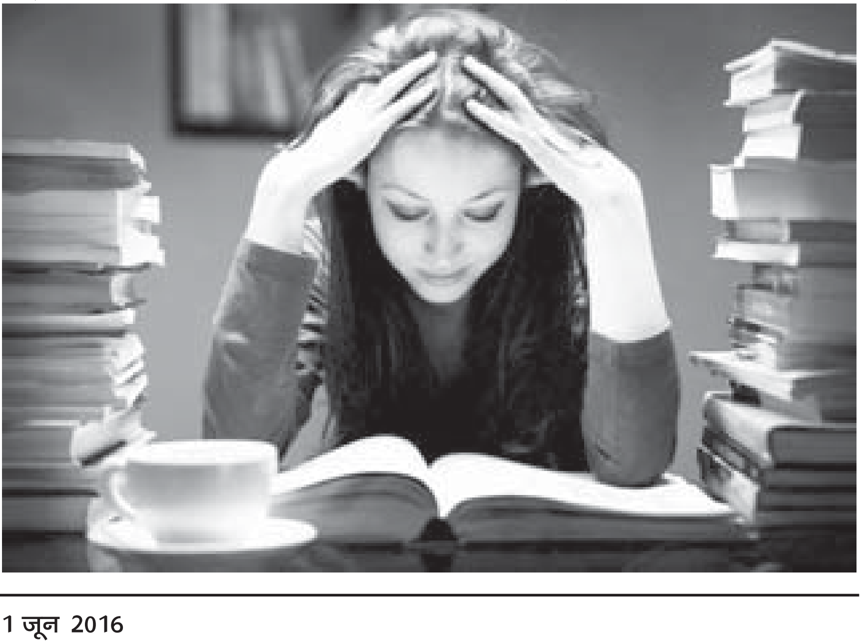

दृष्टि से एक हद तक संदिग्ध भी, लेकिन हम उन्हें अपनाने के लिए अंधी और अंतहीन दौड़ में शामिल हो रहे हैं। आज विभिन्न अंतरराष्ट्रीय संगठन प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से दिशा-निर्देश देते हैं, जिनके अनुसार नीति निर्धारण किया जाता है। कौन से विषय आगे बढ़ेंगे और उन्हें किन मुद्दों पर शोध के लिए क्या सहायता मिलेगी? यह सब उन्हीं नीतियों पर निर्भर करता है न कि स्थानीय दशाओं या क्षमताओं के ऊपर। स्वायत्तता कितनी दी जाए? यह हमारा अपना निर्णय नहीं होता है। संस्थाओं को स्वायत्तता प्राप्त नहीं है। उनके ऊपर तमाम बंधन दर बंधन की ऐसी झाड़ी लगी है कि विश्वविद्यालय हर बात के लिए मुँह देखता है और सरकारी आदेश की बाट जोहता है। सरकार का तंत्र हावी है और नौकरशाही का प्रभाव शैक्षिक प्रशासन को दूषित और बाधित कर रहा है। ऐसे में हर चीज अपनी जगह स्थिर है, गतिहीन है।

भौतिक या प्राकृतिक विज्ञानों, समाज विज्ञानों और मानवीकी के विभिन्न विषयों को एक ही तराजू से नहीं तौला जा सकता। इन सबमें ज्ञान की प्रकृति और उनके निर्माण और प्रयोग में सांस्कृतिक संदर्भ की प्रासंगिकता अलग-अलग है। अब उसमें कौशल विकास भी जुड़ रहा है, ज्ञान का उत्पादन भी और ज्ञान का उपयोग भी। उपनिवेशवादी दौर के बाद साम्राज्यवादी मानसिक चिंतन से आजादी आवश्यक है। आज अनुकरण की इच्छा बलवती है और हम बिना सोचे समझे जो कुछ भी कहीं भिन्न दिखता है, अपनाने दौड़ते हैं। उनके पास है तो हमारे पास क्यों न हो इस तर्क का अनुसरण करते हुए अपने को पश्चिमी विश्वविद्यालयों का क्लोन बनाते जा रहे हैं, प्रतिस्पर्धा जीवन की धुरी बनाती जा रही है। इस प्रक्रिया में पूँजीवाद ही एक मात्र मार्गदर्शक है। विश्वविद्यालय भी औद्योगिक संस्थाओं की तर्ज पर चलाए जाने लगे हैं। नौकरशाही उनके पूरे परिवेश पर हावी है। शिक्षा संस्थाओं का संचालन, औद्योगिक संगठन या घरानों की तर्ज पर हो रहा है। इस मॉडल का शिक्षा की गुणवत्ता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है। भारतीय संविधान में न्याय, स्वतंत्रता, समता और बंधुत्व की चर्चा है। इसमें जिस मनुष्य की संकल्पना की गई है वह उच्च शिक्षा केंद्रों से एक भिन्न तरह के मानस के निर्माण की अपेक्षा करता है, लेकिन आज जिस तरह क्वालिटी को क्वांटिटी में बदलने की कोशिश हो रही उससे कई खतरे पैदा हो रहे हैं और गुणवत्ता को नुकसान पहुँच रहा है। यदि वैश्विक ही महत्त्वपूर्ण है तो स्थानीय का क्या होगा? शिक्षा एकरूपी नहीं होनी चाहिए। सिखाने वाला संगठन ऐसा हो जो स्वतंत्रता/स्वायत्तता पर बल दे। उसे बदलाव के लिए तत्परता होना चाहिए। तभी रचनाशीलता आ सकेगी। उसे 'रिजिड' नहीं होना चाहिए। शैक्षिक संस्थान वस्तु नहीं पैदा करते वे मनुष्य रचते हैं और ज्ञान के द्वारा उसका परिष्कार और परिमार्जन करते हैं। हमें विचार करना चाहिए कि उच्च शिक्षा का उद्देश्य क्या है? हम किस तरह के मनुष्य की परिकल्पना कर रहे हैं? हर शिक्षा संस्था अपनी शक्ति और विशिष्टता के साथ उन क्षेत्रों को रेखांकित करें जिनमें प्रामाणिक रूप से उसके द्वारा योगदान संभव है। उसका उद्यम यदि उस क्षेत्र विशेष में केंद्रित हो तो बात बन सकती है। मोटे तौर पर कह सकते हैं कि गुणात्मक शिक्षा की यह स्वाभाविक अपेक्षा होती है कि उसमें छात्र और अध्यापक, दोनों ही ज्ञान की प्रक्रिया के साथ गहराई से जुड़ें। गुणवत्ता की तलाश के लिए दरकार है आंतरिक पुनराविष्कार की। ❑

A Deligation of AJKLTF Poonch District Meet the CEO

Poonch District unit of All Jammu Kashmir and Ladakh Teacher Federation led by its District President Darshan Kumar and District Secretary Harish Sharma called on the Chief Education Officer Poonch Lal Hussain, apprising him about warious issues concerning the teachers and submitted suggestions for the improvement in the education system. The detailed report was submitted in Education Minister through CEO Poonch.

Poonch unit of AJKLTF to find out the causes of poor result of govt schools and how it can be improved. The committee after organizing various meeting of teachers and prominent citizens at various places in the district drafted a report where suggestions were also submitted for improving standard of education in the district.

The Education Minister, J & K through CEO Poonch was apprised about the demands including reorganization in the department, perganisation and aerations of new education zones, keep teachers free from assignments other than teaching, Mid Day Meal be out sourced, proper implementation of transfer policy, permission for higher studies to equip the teaching community with higher education, need to review the result bar criteria for annual increment, timely issuance increment, timely issuance of annual calendar/syllabus, visit of higher official s at root level, all schools must have teachers of all subjects, central schemes should be implemented in toto in J&K, proper representation.

राष्ट्रीय शिक्षा नीति का प्रारूप सरकार को सौंपा

राष्ट्रीय शिक्षा नीति का प्रारूप तैयार करने के लिये गठित पूर्व केन्द्रीय केबिनेट सचिव श्री टी.एस.आर. सुब्रह्मणियम समिति ने केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री श्रीमती स्मृति ईरानी को 27 मई को राष्ट्रीय शिक्षा नीति का प्रारूप प्रस्तुत कर दिया। प्रस्तावित प्रारूप में समिति ने पुरजोर मत व्यक्त किया है कि 'मूल्य आधारित शिक्षा' (Value Education) पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाना चाहिये। समिति के अनुसार प्रत्येक छात्र को भारतीय होने पर गर्व होना चाहिये। इस भावना को पनपाने व सुदृढ़ करने में विद्यालयों को बड़ी भूमिका निभानी होगी। समिति ने पाँचवीं कक्षा के पश्चात् कमजोर छात्रों को उसी कक्षा में रोके जाने का सुझाव दिया है। समिति की अनुशंषा है कि भारतीय प्रशासनिक सेवा की भाँति अखिल भारतीय शिक्षा सेवा गठित करने का सुझाव दिया है। शिक्षा नीति के प्रारूप 90 सुझाव सम्मिलित किये गये हैं। इन सुझावों में यूजीसी, एआईसीटीई (UGC & AICTE) जैसी नियामक संस्थाओं में व्यापक परिवर्तन के साथ देश में विदेशी विश्वविद्यालयों को परिसर स्थापित करने की अनुमति देना प्रस्तावित है। निजी व सार्वजनिक क्षेत्र के सभी उच्च शिक्षण संस्थानों को एक कड़े नियामकीय नियंत्रण व अनिवार्य गुणवत्ता अंकेक्षण के तहत कार्य करना होगा। समझा जाता है कि स्कूल स्तर पर अपनाये गये त्रिभाषा फार्मूले में किसी परिवर्तन का सुझाव नहीं है।

1. मूल्य आधारित शिक्षा व राष्ट्रीय भाव के साथ भारतीय होने पर गर्व की शिक्षा।
2. पाँचवीं के बाद नहीं रोकने में बदलाव लावे।
3. विदेशी विश्वविद्यालयों को आने देने के कठोर नियम बनावें।
4. अखिल भारतीय शिक्षा सेवा का सुझाव।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति का प्रारूप तैयार करने के लिये पाँच सदस्यीय समिति का गठन पूर्व केन्द्रीय कैबिनेट सचिव श्री टी.एस.आर. सुब्रह्मणिम की अध्यक्षता में किया गया था। इस समिति को मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा प्रस्तावित विषयों पर चर्चा पत्र तैयार कर राष्ट्रीय स्तर पर माँगे गये विचारों से प्राप्त फीड बैक में सम्मिलित सुझावों के आधार पर राष्ट्रीय शिक्षा नीति तैयार करने का दायित्व दिया गया था। स्मरणीय है कि 33 विषयक चर्चा पत्र पर देश भर के स्कूल स्तर से लेकर राष्ट्रीय स्तर तक व्यापक विचार विमर्श हुआ जिससे आम राष्ट्रीय सहमति वाली शिक्षा नीति तैयार की जा सके। देश में 30 वर्ष पूर्व 1986 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति अपनाई गयी थी। इन 30 वर्षों में अनेक व्यापक राष्ट्रीय, आर्थिक सामाजिक व राजनीतिक परिवर्तनों के साथ-साथ नीतिगत परिवर्तनों के कारण 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति अप्रभावी व अप्रासंगिक बन गयी थी। वर्तमान समिति में सुब्रह्मणियम के अतिरिक्त दिल्ली व गुजरात के पूर्व मुख्य सचिव सर्वश्री शैलजा चन्द्र व सुधीर मनकड तथा एनसीईआरटी के पूर्व निदेशक श्री जे.एस. राजपूत शामिल थे।

इस प्रतिवेदन पर अब सरकार द्वारा विचार किया जायेगा व राष्ट्रीय शिक्षा नीति का ड्राफ्ट तैयार किया जायेगा, जिसे सार्वजनिक चर्चा व सुझावों के रूप में फीड बैक, प्राप्त करने के लिये सार्वजनिक किया जायेगा।

समिति का सुझाव है कि सरकार नहीं रोके जाने के प्रावधान पर पुनर्विचार करे ताकि कक्षा 5 के बाद यदि तीन प्रयासों में भी कोई छात्र/छात्रा अपने सीखने के स्तर के बैक लॉग को क्लीयर करने में सफल नहीं होता है, तो उसे रोके जाने पर विचार होना चाहिये। वर्तमान में शिक्षा के अधिकार कानून की व्यवस्था में आठवीं कक्षा तक किसी भी छात्र/छात्रा रोका नहीं जा सकता है छात्र का वार्षिक आधार पर टैस्ट लिया जायेगा, परन्तु वह तब तक ऊँची कक्षा में नहीं जा पायेगा, जब तक कि वह वार्षिक परीक्षा उत्तीर्ण नहीं करता है। समिति ने ऐसे विद्यार्थियों के लिये अवकाशों अथवा स्कूल समय के बाद उपचारात्मक कक्षायें लगाये जाने की पुरजोर सिफारिश की है। कमजोर छात्रों को वर्ष में तीन अवसर दिये जायेंगे जिसमें उसे परीक्षा पास करनी होगी। यदि वह वर्ष भर में दिये तीन अवसरों में सीखने के अपेक्षित स्तर तक नहीं आ पाता है, तो स्कूल उसे उसी स्तर पर रोक सकता है और उसे किसी वोकेशनल कोर्स में प्रवेश के लिये प्रेरित किया जा सकता है।

यहाँ यह स्मरण दिलाना लाभदायक होगा कि 'फेल नहीं किये जाने' के प्रावधान का व्यापक विरोध हो रहा है। 15 राज्य सरकारें इस प्रावधान को निरस्त करने के पक्ष में मत रख चुकी है। 15 राज्य सरकारों का मत है कि इस प्रावधान के कारण शिक्षा का स्तर तेजी से गिर रहा है। आठवीं कक्षा तक नहीं रोके जाने के प्रावधान के कारण बच्चों ने पढ़ाई को गंभीरता से लेना बंद कर दिया है। आठवीं तक फेल नहीं होने के कारण छात्र-छात्रा कक्षाओं को गंभीरता से नहीं लेते हैं। कमजोर स्तर के बावजूद उन्हें माध्यमिक कक्षाओं में प्रवेश मिल जाता है। स्कूलों का मत है कि इससे माध्यमिक स्तर की परीक्षाओं में 'असफल' छात्रों की संख्या बड़ी मात्रा में बढ़ी है। प्रथम सार्वजनिक परीक्षा में यह एक बड़ी कमजोरी के रूप में प्रकट हुई है।

देश में विश्वसनीय शैक्षिक नेतृत्व विकसित करने की दृष्टि से अखिल भारतीय शिक्षा सेवा के गठन की पुरजोर अभिशंषा की गई है। समिति ने इसके लिये केन्द्रीय लोक सेवा आयोग जो कि अखिल भारतीय सेवाओं के लिये अधिकारी चुनने के लिये परीक्षा संपन्न कराता है तथा योग्य उम्मीदवारों का चयन करता है के द्वारा अखिल भारतीय शिक्षा सेवा के अधिकारियों को चुनने का दायित्व देने की अनुशंषा की है। समिति ने

पाया है कि उच्च शिक्षा में नेशनल असेसमैंट व एक्रिडीटेशन काउन्सिल (NAAC) वर्तमान में गुणवत्ता परीक्षण के लिये पूर्णत: सक्षम व साधन सम्पन्न नहीं है। एतदर्थ समिति का सुझाव है कि शिक्षा की गुणवत्ता व इंफ्रास्ट्रक्चर की दृष्टि से प्रत्येक उच्च शिक्षा संस्थान का तीन वर्ष में एक बार अनिवार्य आडिट के लिये चार्टर्ड एकाउंटेन्टस की भाँति शिक्षा ऑडीटर्स तैयार किये जायें। इसके लिये नैक (NAAC) शैक्षिक गुणवत्ता तथा इंफ्रास्ट्रक्चर के लिये मानक तैयार करने का दायित्व पूर्ण करेगा व चार्टर्ड शिक्षा ऑडीटर्स इनकी पालना सुनिश्चित करने में योग देंगे। इस नैक (NAAC) उच्च शिक्षा संस्थानों के नियामक के स्थान पर शिक्षा ऑडीटर्स को नियंत्रित करने का कार्य करेगा। इनके साथ-साथ समिति ने डिजिटल इंडिया इनीशियेटिव के अन्तर्गत सभी स्कूलों, छात्रों, शिक्षकों, सीखने के परिणामों व गत दो वर्षों में सभी की उपब्धियों को प्रमोशन से जोड़ने व निगाह रखने का सुझाव दिया है। समिति का दृढ़ मत है कि कक्षा 8 का विद्यार्थी जो कक्षा की पाठ्यसामग्री को नहीं पढ़ सकता है, को हर हालत में रोका जाना चाहिये।

– शैक्षिक मंथन प्रस्तुति

समिति के मुख्य सुझाव

1. शिक्षा में मूल्य आधारित शिक्षा (Value Education) पर विशेष ध्यान दिया जाय और विद्यार्थियों 'राष्ट्रीयता व गौरव' के भाव विकसित करने के प्रयास किये जायें।
2. कक्षा 5 के बाद रोके जाने का प्रावधान किया जाय। रोके जाने से पूर्व छात्र को वर्ष में तीन अवसर प्रदान किये जायें। इन में सफल होने पर ही कक्षा 6 में प्रमोट किया जाय।
3. सभी स्कूलों, विद्यार्थियों व शिक्षकों को डिजिटल इंडिया इनीशियेटिव के अन्तर्गत लाया जाये व उनके प्रमोशन को उनका उपलब्धियों से जोड़ा जाये।
4. अखिल भारतीय शिक्षा सेवा का गठन किया जाय।
5. कठोर नियामकीय नियंत्रण रखते हुये विदेशी शिक्षण संस्थानों को देश में परिसर स्थापित करने की अनुमति दी जाय।
6. नियामकीय संस्थानों यथा यूजीसी इत्यादि के जाँच में आमूल चूल परिवर्तन किये जायें।
7. वर्तमान में स्कूलों में प्रचलित त्रिभाषा फार्मूले को जारी रखा जाय।

शिक्षक प्रशिक्षण विषय का प्रतिवेदन शिक्षा मंत्री को सौंपा

शैक्षिक मंथन संस्थान द्वारा शिक्षक प्रशिक्षण-चुनौतियाँ एवं सम्भावनाएँ विषय पर हाल में आयोजित एक दिवसीय संगोष्ठी का प्रतिवेदन 17 मई 2016 को उच्च शिक्षा मंत्री कालीचरण सर्राफ को संस्थान के प्रतिनिधि मंडल ने सचिव, महेन्द्र कपूर के नेतृत्व में दिया गया। प्रतिनिधि मंडल में अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के कोषाध्यक्ष बजरंग प्रसाद मजेजी, संगोष्ठी संयोजक डॉ. राजेन्द्र कुमार शर्मा, डॉ. ओम प्रकाश पारीक एवं भरत शर्मा रहे।

राज्य सरकार द्वारा प्रति वर्ष राज्य में बी.एड. महाविद्यालय में प्रवेश हेतु एक विश्वविद्यालय को पी.टी.ई.टी. परीक्षा के आयोजन एवं प्रवेश कार्य का दायित्व आवंटित किया जाता है। शिक्षक प्रशिक्षक विश्वविद्यालय के अस्तित्व में आने तक किसी एक निर्दिष्ट विश्वविद्यालय को पी.टी.ई.टी. व तत्संबंधी प्रवेश कार्य की जिम्मेदारी दी जानी चाहिए ताकि प्रवेश कार्य प्रति वर्ष 25 जून तक सम्मन्न हो सके।

शिक्षक प्रशिक्षण की प्रवेश प्रक्रिया में शिक्षक बनने की रूचि व अर्हता रखने वाले अभ्यासार्थियों का चयन हो, इस हेतु प्रबंध संबधी विषयों में यथोचित संशोधन करना चाहिए। इसके लिए ऐसे आवेदकों की अभिरूचि परीक्षा होनी चाहिए।

शिक्षक प्रशिक्षक महाविद्यालय के साथ एक माध्यमिक विद्यालय आवश्यक रूप से संचालित होना चाहिए जिससे प्रशिक्षण ले रहे प्रशिक्षु उत्तम प्रशिक्षण देख सकें तथा वहां अपना शिक्षणाभ्यास कर सकें। इस व्यवस्था में प्रशिक्षुओं के प्रशिक्षण को उत्तम बना सकेंगे एवं विद्यालय के आदर्श शिक्षकों की देख रेख में अच्छे आदर्श शिक्षकों का निर्माण हो सकेगा। शिक्षक प्रशिक्षक महाविद्यालय को एन.ओ.सी. देते समय इसे शर्त के रूप में जोडा जाए।

शिक्षक प्रशिक्षक के मूल्यांकन में सभी मानकों के अनुसार सैद्धान्तिक व प्रायोगिक दानों स्तरों का समुचित मूल्यांकन होना चाहिए।

शिक्षक कार्य अत्यंत महत्त्वपूर्ण है यह समझकर प्रत्येक स्तर पर चाहे वह प्रशासनिक स्तर हो, विद्यालय स्तर हो, या नितियों के क्रियान्वयन का स्तर हो उससे संबंधित अधिकारी, कर्मचारी, शिक्षक निष्ठा के साथ अपने सामर्थ्य से एवं अपनी और से जो भी उत्तम हो, ऐसे गिलहरी प्रयास करते रहें तभी शिक्षण की व्यवस्था देने वाले व्यक्तियों की प्रसंशा पत्र व सम्मान भी मिलने चाहिए।

भारत के वैश्विक शक्ति के रूप में उभरने में शिक्षा की महत्त्वपूर्ण भूमिका होगी, जिसमें कौशल विकास, मेक इन इंडिया जैसे कार्यक्रम के परिणामस्वरूप जो परिदृश्य बदलेगा उसके अनुरूप शिक्षा व शिक्षक प्रशिक्षण व्यवस्था में परिवर्तन होगा।

मूल्यांकन व्यवस्था में परिवर्तन स्वयं एक चुनौती है। चाहे वह पारम्परिक परीक्षा पद्धति हो या सतत् व समग्र मूल्यांकन की सफलता अंतत: शिक्षकों पर ही निर्भर करती है। यदि शिक्षक इन अपेक्षाओं पर खरे नहीं तो समाज की हानि संभव है। इस चुनौती से निपटने के लिए देशानुकूल व समयानुकूल निर्णय आवश्यक है।

शिक्षक प्रशिक्षकों को समय समय पर होने वाले रिफ्रेशर पाठयक्रमों में भाग लेना चाहिए। जिससे शिक्षक प्रशिक्षण में हो रहे नवाचारों का लाभ छात्रों को मिल सके। शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों को आदर्शविद्यालयों से जोड़ा जाना चाहिए, जिससे शिक्षक प्रशिक्षण की गुणवत्ता बढेगी।

उच्च शिक्षा मंत्री से इसके बारे में विस्तार से चर्चा हुई और इसे अमल में लाने की बात कही। इस प्रतिवेदन की प्रति एनसीटीई, एनसीईआरटी एवं मानव संसाधन विकास मंत्रालय को भी भेजी जायेगी।

अ.भा.रा.शै. महासंघ का कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग मैसूर में सम्पन्न

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ का अखिल भारतीय कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग प्रमिति हिल व्यू अकेडमी, कुवेम्पू नगर, मैसूर (कर्नाटक) में 22 से 24 मई तक सम्पन्न हुआ। इस अभ्यास वर्ग के नौ सत्रों में कार्यकर्ताओं को संगठन की कार्य पद्धति का अभ्यास करवाया गया। जिसमें पूरे देश से संगठन से सम्बद्ध 17 राज्यों के एवं विश्वविद्यालय प्रान्तीय संगठनों के 128 पदाधिकारी एवं कार्यकर्ता सम्मिलित हुये। कार्यकर्ताओं को अपने अनुभव के आधार पर तीन समूहों में बाँटकर चक्रीय बैठकें भी। तीन दिन तक चले इस अभ्यास वर्ग में संगठन के वैचारिक अधिष्ठान सांस्कृतिक राष्ट्रीयता के अनुसार कार्यकर्ता निर्माण पर बल दिया। इस वर्ग में कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग के महत्त्व, कार्यकर्ता की मनोभूमिका, कार्यपद्धति, कार्यक्रम, कार्यकर्ता का प्रवास, संगठन में सदस्यता आदि विषयों पर संगठन के अनुभवी उच्च पदाधिकारियों एवं विषय विशेषज्ञों द्वारा व्याख्यान दिये गये एवं खुली चर्चा के माध्यम से कार्यकर्ताओं को अभ्यास करवाया गया।

अभ्यास वर्ग में मा. अनिरुद्ध देशपांडे (अखिल भारतीय सम्पर्क प्रमुख, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ) ने वैचारिक अधिष्ठान पर प्रबोधन करते हुये कहा कि कार्यकर्ताओं में हमारे मूलभूत चिन्तन का अभ्यास करते रहने से प्रतिबद्धता बढ़ती है एवं संगठन एवं कार्यकर्ता दोनों का चिन्तन एक होना ही उत्तम कार्यकर्ता की निशानी है। डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल (राष्ट्रीय अध्यक्ष, अ.भा.रा.शै. महासंघ) ने अभ्यास वर्ग की उपलब्धि यहाँ सीखी बातों को कार्यकर्ताओं द्वारा अपने क्षेत्र में उतारना बताया एवं संगठन की प्रकृति के अनुसार कार्यकर्ता निर्माण करने पर जोर दिया। प्रो. जे.पी. सिंघल (राष्ट्रीय महामंत्री) ने अपने वक्तव्य में बताया कि अब पूरे देश में संगठन का अस्तित्व दिखाई देने लगा है एवं हमने जो शाश्वत जीवन मूल्य जैसे कार्यक्रम हाथ में लिये हैं उनसे समाज में बदलाव आयेगा। उन्होंने यह भी बताया कि हमने शिक्षक सम्मान का कार्यक्रम प्रारम्भ किया है उससे अच्छी प्रतिभाओं को प्रोत्साहन मिलेगा।

अभ्यास वर्ग में मा. सुब्रह्मणियम भट्ट (कुटुम्ब प्रबोधन के अ.भा. प्रमुख) ने कार्यकर्ताओं को प्रतिदिन अपने व्यवहार की समीक्षा करते रहने एवं अपने में उत्तम व्यवहार योग्यता उत्पन्न करने की बात कही। इतिहास संकलन समिति के संरक्षक एवं संघ के वरिष्ठ प्रचारक मा. हरिभाऊ बजे जी ने 'माताभूमि पुत्रोऽहं पृथिव्या' मन्त्र के अनुसार इस भूमि को माता मानते हुये कार्यकर्ताओं में राष्ट्रीयता के विकास करने की बात कही। राष्ट्रीय संगठन मंत्री मा. महेन्द्र कपूर ने संगठन की सदस्यता पर अपना वक्तव्य प्रस्तुत करते हुये वार्षिक सदस्यता को संगठन के विस्तार और विकास का आधार बताया। प्रो. के. बालकृष्ण भट्ट (अतिरिक्त महामंत्री) ने कार्यकर्ताओं में प्रवास के महत्त्व को समझाया। श्री ओमपाल सिंह (सह संगठन मंत्री) ने कार्यक्रम के प्रकार एवं स्वरूप पर प्रकाश डाला। श्री महेन्द्र कुमार (प्रभारी उच्च शिक्षा) ने कार्यकर्ताओं में स्नेह एवं अपनत्व द्वारा संगठन के विकास की बात करते हुए कार्यकर्ताओं में कार्य पद्धति की पालना पर जोर दिया। अभ्यास वर्ग में प्रो. प्रगनेश शाह (सचिव, उच्च शिक्षा संवर्ग) ने उद्घाटन कार्यक्रम एवं डॉ. मनोज सिन्हा ने समापन कार्यक्रम का संचालन किया। कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग संयोजन प्रशिक्षण प्रकोष्ठ प्रमुख एच. नागभूषण राव ने किया तथा प्रबन्धन प्रमुख कर्नाटक राज्य माध्यमिक शिक्षक संघ के महामंत्री शिवानन्द सिन्दनकेरा थे।

अ.भा.रा.शै. महासंघ की राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक सम्पन्न

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ की राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक प्रमिति हिल व्यू अकेडमी, कुवेम्पू नगर, मैसूर (कर्नाटक) में 22 मई 2016 को सम्पन्न हुई।

बैठक में पूरे देश से संगठन के पदाधिकारी सम्मिलित हुये। कार्यक्रम का प्रारम्भ दीप प्रज्वलन एवं सरस्वती वंदना से हुआ। सर्वप्रथम सभी प्रान्तों से आये हुये कार्यकर्ताओं ने अपना परिचय प्रस्तुत किया। कार्यकारिणी की बैठक चार सत्रों में सम्पन्न हुई जिसमें पदाधिकारियों द्वारा अपने-अपने प्रान्त में शिक्षकों की समस्याओं के समाधान एवं कल्याण के लिये किये गये विशेष कार्यों का विवरण प्रस्तुत किया एवं अग्रिम कार्ययोजना प्रस्तुत की गयी। संगठन के प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा संवर्ग ने अपने संवर्ग की बैठक आयोजित कर उनमें गहन चिन्तन कर अपने संवर्ग की रिपोर्ट तैयार कर उसका वाचन कार्यकारिणी के सामुहिक सत्र में किया।

कार्यकारिणी की बैठक में सभी सम्बद्ध संगठनों का कार्यवृत्त प्राप्त किया गया एवं विभिन्न संगठनों के द्वारा सम्पन्न किये गये कार्यक्रमों की समीक्षा की गयी। महासंघ के वैचारिक अधिष्ठान के कार्यक्रमों की भी समीक्षा की गयी। इस बार कार्यकारिणी में प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च शिक्षा संवर्ग के शिक्षकों की समस्याओं पर गहन विचार विमर्श कर उनके समाधान के सम्बन्ध में किये जाने वाले उपायों पर विचार किया गया। एतदर्थ आवश्यक कदम उठाने का निर्णय लिया गया।

राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) द्वारा जिला मुख्यालयों पर धरना-प्रदर्शन

प्रदेश के आह्वान पर राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) की जिला इकाई उदयपुर ने जिला कलेक्टर कार्यालय के बाहर 31 मई 2016 को धरना प्रदर्शन कर जिला कलेक्टर एवं शिक्षामंत्री के नाम ज्ञापन सौंपा।

जिला अध्यक्ष राजेन्द्रसिंह सारंगदेवोत ने बताया कि प्रारम्भिक शिक्षा से लेवल-1 एवं लेवल-2 में 6डी के अन्तर्गत माध्यमिक शिक्षा में शिक्षकों को समायोजित करने हेतु काउन्सलिंग आयोजित की जा रही है इसमें कई विसंगतिया एवं भारी खामियाँ है जिनका पहले निस्तारण किया जाना चाहिए। निस्तारण पश्चात संगठन से वार्ता कर हल निकाल कर समायोजन की कार्यवाही करे।

जिला मंत्री बसन्तीलाल श्रीमाली ने काउन्सलिंग सूचियों में विभाग ने वरीयता का ध्यान नहीं रखा है, कई जगह कनिष्ठ को काउन्सलिंग में पहले बुलाया गया ओर वरिष्ठ को बाद में जबकि वरिष्ठ को पहले बुलाया जाना चाहिए। कई वरिष्ठ शिक्षकों के नाम ही गायब है, सरकार द्वारा जारी निर्देशों की पालना में प्रारम्भिक शिक्षा में पहले पद भरने एवं शिक्षकों को जबर्दस्ती सहमति पत्र नही भरवाये जाने चाहिए की बात कही।